उत्तराखण्ड कृषि नीति–2018

(प्रस्तावित ड्राफ्ट)

कृषि विभाग, उत्तराखण्ड

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1	प्रस्तावना	3
2	उत्तराखण्ड की कृषि विविधिता	5
3	क्षमतायें, अवसर एवं प्राथमिकताऐं	6
4	कृषि नीति 2018 के उद्देश्य	9
5	नीति एवं रणनीति	11
6	एकीकृत कृषि पद्धति	11
7	कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने की रणनीति	11
8	कृषि ऋण एवं बीमा	15
9	सहकारिता	15
10	जैविक कृषि	16
11	उद्यान एवं खाद्य प्रसंस्करण	17
12	चाय विकास बोर्ड	20
13	जड़ी–बूटी	21
14	सगंधीय नीति	22
15	रेशम विकास	26
16	कृषि मौसम विज्ञान	28
17	पशुपालन	27
18	मात्स्यिकी	30
19	मूल्य संवर्धन एवं प्रसंस्करण	30

कृषि नीति 2018

प्रस्तावना

1. उत्तराखण्ड का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 59,926 वर्ग कि0मी0 है, जिसका 37999 वर्ग कि0मी0 (63.41 प्रतिशत) वन आच्छादित है। वर्तमान में कुल 6.98 लाख हैक्टेयर कृषि के अन्तर्गत है, जो कि कुल क्षेत्रफल का केवल 11.65 प्रतिशत है। 1.43 लाख हैक्टेयर परती भूमि तथा 3.18 लाख हैक्टेयर कृषि बंजर प्रतिवेदित है। कृषि राज्य की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है। वर्तमान में प्रदेश अन्न उत्पादन में आत्मनिर्भर है। राज्य स्थापना के उपरान्त गत 16 वर्षों में लगभग 72,000 हैक्टेयर कृषि भूमि में कमी आई है। प्रदेश गठन के उपरान्त विभिन्न अवस्थापना सुविधाओं के विकास को तीव्र गति मिली है, जिसके कारण कृषि भूमि का अन्य प्रयोजनों यथा–आवासीय, शिक्षण संस्थानों, उद्योगों, सड़क आदि हेतु व्यावर्तन हुआ है। पर्वतीय क्षेत्रों में दैवीय आपदा, भू–स्खलन होने, जंगली जानवरों से खेती को नुकसान पहुँचाये जाना, कम वर्षा एवं पलायन आदि समस्याओं के कारण कृषि के प्रति रूचि कम हुयी है जिससे उत्पादन प्रभावित हुआ है।

2. प्रदेश में कुल कृषि क्षेत्र का लगभग 54 प्रतिशत पर्वतीय कृषि के अंतर्गत आता है, जबकि प्रदेश की कुल सिंचित कृषि भूमि (540999 है0) का लगभग 13 प्रतिशत (76228 है0) ही पर्वतीय क्षेत्र में आता है। इस कारण पर्वतीय क्षेत्र की खेती वर्षा पर ही निर्भर है। पर्वतीय एवं मैदानी क्षेत्र में कृषि की दशायें बिल्कुल भिन्न हैं। मैदानी क्षेत्र की मृदा उपजाऊ है तथा इस क्षेत्र में किसानों द्वारा अत्याधुनिक तकनीकों को उपयोग में लाते हुये कृषि उत्पादकता में वृद्धि हो रही है। पर्वतीय क्षेत्रों में सिंचाई सुविधा की कमी, छोटी एवं बिखरी हुयी जोतें तथा सीढ़ीनुमा खेतों के कारण विकसित तकनीकों एवं मशीनरी का उपयोग सीमित है। फलतः पर्वतीय क्षेत्रों में विभिन्न फसलों की उत्पादकता मैदानी क्षेत्रों की तुलना में आधे से भी कम है। लेकिन दूसरी ओर यह भी एक सत्य है कि पर्वतीय क्षेत्र मृदा एवं जलवायु की विविधता के कारण कम जल ग्रहण करने वाली विभिन्न प्रकार की फसलों यथा दालों, मक्का, मंडुवा, सॉवा, रामदाना, बेमौसमी सब्जियों, मिर्च मसालों, सगंध एवं औषधीय पादपों के उत्पादन के लिये सर्वथा उपयुक्त है। पर्वतीय क्षेत्रों में इसी दिशा में प्रयास करने की आवश्यकता है, जबकि मैदानी क्षेत्रों में कृषि विविधीकरण के साथ–साथ उत्पादन में वृद्धि करने की आवश्यकता है।

3. उत्तराखण्ड प्रदेश के सामाजिक–आर्थिक ढ़ांचे में कृषि को इस तथ्य से महसूस किया जा सकता है कि प्रदेश के अधिकांश जनसंख्या की आजीविका कृषि पर निर्भर है। कुल सकल घरेलू उत्पाद (जी डी पी) में कृषि क्षेत्र का योगदान केवल 2.61 प्रतिशत है जबकि लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या इस पर निर्भर है जिसके फलस्वरूप कृषि क्षेत्र में प्रति व्यक्ति आय कम है। इससे यह भी पता चलता है कि कृषि क्षेत्र और गैर–कृषि क्षेत्र में प्रति व्यक्ति आय के बीच बड़ी असमानता है। अतः उन समस्याओं का समाधान करना आवश्यक है, जो किसानों के आय स्तरों पर प्रभाव डालते हैं। आय का स्तर कुल उत्पादन तथा उचित उत्पादकता स्तर और किसानों द्वारा प्राप्त मूल्यों द्वारा निर्धारित होता है। लघु और सीमान्त जोतों का आधिक्य जो कुल जोतों का लगभग 91 प्रतिशत है, अपूर्ण बाजार दशाएं तथा पश्च और अग्र सम्पर्कों की कमी जैसी बाधाएं भी किसानों के आय स्तरों को दुष्प्रभावित करती हैं। तदनुसार, कृषि कार्यकलाप अधिक व्यवहार्य बने और किसानों की आर्थिक स्थिति में स्थायी सुधार सुनिश्चित हो, इसके लिये एक उपयुक्त नीति तैयार किए जाने की आवश्यकता है।

4. विगत में कृषि अनुसंधान, शिक्षा और विस्तार को मजबूत बनाने के साथ ही गुणवत्तायुक्त बीज, खाद एवं रसायन जैसे मूलभूत आगतों की सामयिक और पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए अनेक कदम उठाये गये। इसके अतिरिक्त, सिंचाई परियोजनाएं भी कार्यान्वित की गई। विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थानों के वैज्ञानिकों ने अधिक पैदावार वाली किस्मों/फसलों की संकर प्रजातियां तथा प्रौद्योगिकी विकसित करने में योगदान दिया हैं। जिसे कृषकों द्वारा अपनाते हुए लाभ अर्जित किया गया है। इसके अलावा फसल सघनता बढ़ाने पर बल दिया गया है। जिसके कारण कृषि उत्पादन में निरंतर वृद्धि बनी रही और खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि दर जनसंख्या वृद्धि के स्तर से ऊपर रही। पिछले दशक के दौरान उत्पादन और उत्पादकता लगभग स्थिर बनी रही और विकास की दर भी धीमी हो गई। इस हेतु कृषि क्षेत्र में वृद्धि तथा विकास किये जाने के लिए समय के साथ नई प्रौद्योगिकी एवं नीति अपनाये जाने की आवश्यकता है।

5. वर्ष 2011 में प्रदेश सरकार द्वारा उत्तराखण्ड कृषि नीति–2011 प्रख्यापित की गई थी जिसका लक्ष्य उत्तराखण्ड प्रदेश की जनता की दीर्घकालीन खाद्य एवं पोषण सुरक्षा तथा कृषकों की दीर्घकालीन आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित कराना था। प्रदेश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि के योगदान को अधिक मजबूत तथा समावेशी बनाने के लिए कृषि नीति में अभिनवता आवश्यक है। गैर–कृषि क्षेत्र की तीव्र वृद्धि के समक्ष कृषि क्षेत्र की प्रगति में आई गिरावट और कृषि में घटती लाभकारिता मुख्य चिंता की बात है। जिसके फलस्वरूप किसानों की आय का स्तर कम रहा।

6. सामान्यतया ग्रामीण क्षेत्रों में और विशेष कर कृषि परिवारों में रोजगार अवसरों की कमी तथा पर्वतीय क्षेत्रों में अलाभकारी कृषि भी एक प्रमुख समस्या है। सिंचाई, वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग, पनधारा विकास, बंजर भूमि विकास, भूमि सुधार, उत्पादों का प्रसंस्करण, मूल्य संवर्द्धन, विपणन इत्यादि में निवेश बढ़ा कर कृषि क्षेत्र में रोजगार अवसरों को बढ़ाने के लिए सभी प्रयास किए जाने की आवश्यकता हैं। एक उदीयमान कृषि सेक्टर, बेहतर आधारभूत ढांचा, ग्रामीण सम्पर्कता, और कुशल विकास, ऋण की आसान उपलब्धता, ग्रामीण गैर–कृषि क्षेत्र के विकास, और अधिक रोजगार अवसरों के सृजन में सहायता कर सकता है और ऐसा करने से किसान परिवारों की आय बढ़ेगी।

7. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, उत्पादन के साथ–साथ किसानों के आर्थिक कल्याण पर अधिक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। उत्पादन और वृद्धि के अलावा कृषि नीति का एक प्रमुख निर्धारक सामाजिक–आर्थिक आयाम भी होना चाहिए। अतः इस नीति का उद्देश्य न केवल उनकी उपभोग आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बल्कि उनकी कृषि से सम्बद्ध कार्यकलापों में निवेश क्षमता को बढ़ाने के लिये उन प्रवृत्तियों और कार्यों को प्रेरित करना है जिसके फलस्वरूप कृषि प्रगति का आंकलन पर किसान परिवारों की आय में सुधार हो सके।

उत्तराखण्ड की कृषि विविधता

उत्तराखण्ड कृषि जलवायुगत पारिस्थितिकी के दृष्टिकोण से निर्धारित जोन नम्बर 9 तथा जोन नम्बर 14 के अन्तर्गत है। जनपद ऊधमसिंहनगर, हरिद्वार के पूर्ण भाग एवं जनपद नैनीताल तथा देहरादून के आंशिक भाग मैदानी तराई एवं भाबर क्षेत्र हैं। इनके अतिरिक्त राज्य का शेष अंश पर्वतीय क्षेत्र है। प्रदेश समशीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र से हिमाच्छादित उत्तुंग पर्वतमालाओं तक विस्तीर्ण है। इस कारण केवल समुद्रतटीय जलवायु एवं ऊष्म मरूस्थलीय जलवायु के स्थानों को छोड़कर शेष सभी प्रकार की जलवायुगत विविधता प्रदेश में विद्यमान है। इसके फलस्वरूप प्रदेश भिन्न–भिन्न कृषि पारिस्थितिकीय दशाओं के सापेक्ष प्रभूत कृषिक विविधता से परिपूर्ण है। प्रदेश को कृषि–जलवायिक दृष्टि से समुद्र तल से ऊँचाई के आधार पर निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है।

क्र0सं0	क्षेत्र	कृषि विविधता
1	तराई एवं भाबर क्षेत्र (1000 मीटर तक)	चावल, गेहूँ, गन्ना, मक्का, आम, लीची, दालें, तिलहन, सोयाबीन आदि
2	निम्न हिमालयी क्षेत्र (1000 से 1500 मीटर तक)	चावल, गेहूँ, मोटे अनाज, दालें, सम शीतोष्ण फल, फूल एवं सब्जियाँ आदि
3	मध्य हिमालयी क्षेत्र (1500 से 2400 मीटर तक)	रामदाना, कुट्टू, राजमा, आलू, जौ, मसलों तथा सगन्द पादप, शीत जलवायु के फल, फूल एवं सब्जियाँ आदि
4	उच्च हिमालयी/एल्पाइन क्षेत्र (2400 मीटर से अधिक)	औषधीय एवं सगन्द पादप, आलू, चारागाह, शुष्क फल आदि

2. इन पृथक वर्गीकृत क्षेत्रों के अन्तर्गत भी स्थान विशेष की समुद्र तल से ऊँचाई, ढाल की दिशा तथा मिशिखरों की श्रृंखला से दूरी के कारण जलवायु में विशद् भिन्नतायें है। इनमें समुद्रतल से स्थान विशेष की ऊँचाई मुख्य है। ऊँचें स्थान अधिक ठन्डे होते हैं। इसी प्रकार उत्तरमुखी ढाल दूसरे ढालों की अपेक्षाकृत अधिक ठन्डी एवं आर्द्र होती है। मिशिखरों के समीपस्थ स्थानों में अपेक्षाकृत अधिक ठन्ड पड़ती है। जलवायु की भिन्नता के फलस्वरूप उष्ण, समशीतोष्ण एवं शीत कटिबन्धीय तीनों प्रकार के फलों की खेती सम्भव है। पर्वतीय भूमि की उर्वरता अल्प मृदाच्छादन, अल्प जल एवं पोषक तत्व धारण क्षमता एवं तीव्र भूमि क्षरण के कारण कम है। अधिकांश भू–भाग वर्षा पर निर्भर होने के कारण मौसम में परिवर्तन के प्रति अतिसंवेदनशील है। पर्वतीय भू–भाग में कुल कृषित भूमि का मात्र 13.03 प्रतिशत ही सिंचित है। मैदानी भूमि की उर्वरता पर्वतीय भूमि की अपेक्षा काफी अधिक है परन्तु रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशी रसायनों के असंतुलित प्रयोग से मृदा की उर्वरा शक्ति तथा मृदा में जीवांश कार्बन की लगातार कमी हो रही है, जिसका कु–प्रभाव उत्पादकता तथा उत्पादन की लागत पर पड़ रहा है।

3. उत्तम कृषि भूमि को कृषि के लिए संरक्षित किये जाने की आवश्यकता है। यदि गैर कृषि कार्यों के लिये भूमि प्रदान की जाती है, तो अन्यत्र समकक्ष/निम्नीकृत बंजर भूमि के उपचार और क्षतिपूर्ति की जायेगी। अकृष्य भूमि, क्षारीयता, अम्लीयता इत्यादि से प्रभावित भूमि जैसी निम्न जैविक क्षमता वाली भूमि को ही औद्योगिक और निर्माण कार्यकलापो के लिये चिन्हित की जायेगी।

क्षमतायें, अवसर एवं प्राथमिकतायें

1. अर्न्तनिहित क्षमतायें : –

(1) भौगोलिक एवं जलवायुगत विविधताओं के कारण प्रभूत कृषिक एवं वानस्पतिक विविधतायें विद्यमान हैं। इस कारण सभी प्रकार की फसलें, औद्यानिकी, मौसमी एवं गैर–मौसमी सब्जियों के अतिरिक्त चाय, रेशम, औषधि एवं सगन्ध पादप, मशरूम की खेती तथा मौन पालन वृहद् रूप में सम्भव है।

(2) राज्य के पर्वतीय अंश में परम्परागत कृषि पद्धतियों के कारण प्राकृतिक एवं जैविक संसाधनों का क्षरण अपेक्षाकृत कम हुआ है। परम्परागत पौष्टिक अनाजों को जैविक कृषि के अन्तर्गत उत्पादन की अपार सम्भावनायें है।

(3) तराई एवं भाबर के क्षेत्रों में अत्यंत उपजाऊ मृदा तथा सिंचाई के संसाधन मौजूद हैं। यहाँ कृषि विकसित है।

(4) सही दिशा में अल्प प्रयास एवं नियोजन से उत्पादकता में आशातीत वृद्धि हो सकती है।

(5) प्रदेश में नदियों एवं नालों की कुल लम्बाई लगभग 2800 कि0मी0 है। इसमें से 600 कि0मी0 लम्बाई में मत्स्य पालन सम्भव है। लगभग 25 हजार हैक्टेयर क्षेत्र वृहद् जलाशयों से आच्छादित है। इनका समुचित विकास करने पर कई राज्यों की मत्स्य मांग की आपूर्ति करने में सक्षम होगा।

(6) कृषि शिक्षा एवं शोध के दृष्टिकोण से राज्य सुविधा सम्पन्न है। देश का प्रथम कृषि विश्वविद्यालय–गो0ब0पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पन्तनगर, जनपद ऊधमसिंह नगर में अवस्थित है। इसे हरित क्रान्ति की जननी होने का गौरव प्राप्त है। इसके अतिरिक्त भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अधीन केन्द्रीय मृदा एवं जल संरक्षण शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान, देहरादून तथा विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा मौजूद हैं। औद्यानिकी एवं वानिकी के क्षेत्र में शोध एवं प्रसार के दृष्टिगत वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, भरसार पौड़ी की स्थापना की गयी है, जिसका एक परिसर रानीचौर एवं अन्य जनपदों में भी अवस्थापित है। प्रत्येक जनपद में एक कृषि विज्ञान केन्द्र स्थापित हैं।

(7) पर्वतीय क्षेत्रों में कृषकों द्वारा रसायन एवं उर्वरकों का प्रयोग बहुत कम किये जाने के कारण जैविक खेती के रूप में कृषि कार्य किये जाने की अपार सम्भावनायें है।

2. अक्षमतायें :–

(1) कृषि पारिस्थितिकीय नियोजन एवं प्रबन्धन का अभाव।

(2) भंगुर पारिस्थितिकी।

(3) तीव्र गति से मृदा क्षरण।

(4) छोटी एवं बिखरी जोतें तथा चकबंदी व्यवस्था का न होना।

(5) सिंचाई सुविधाओं की अपर्याप्तता के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि की वर्षा पर निर्भरता।

(6) विशेषकर पर्वतीय क्षेत्रों में उत्पादों के भण्डारण, छंटाई, वर्गीकरण, प्रसंस्करण एवं विपणन (उत्तर फसल प्रबन्धन) से सम्बन्धित अवस्थापना सुविधाओं का अभाव।

(7) विपणन हेतु संस्थागत सुविधायें एवं संस्थाओं का अभाव जिस कारण उत्पादकों को फसलों का उचित मूल्य प्राप्त नहीं होता है।

(8) वन्य जीवों विशेषकर बन्दरों, सुअरों, नील गायों एवं हाथियों से फसलों को अत्यधिक हानि होती है। वन क्षेत्रों में सुदृढ़ वन्य जीव वास प्रबन्धन के अभाव के कारण वन्य जीव फसलों की ओर आकर्षित होते हैं।

(9) सामाजिक एवं आर्थिक विषमतायें। वर्तमान परिदृश्य में पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि कार्य कृषकों को आजीविका सुरक्षा प्रदान करने में सक्षम नहीं है।

3. अवसर :–

(1) विभिन्न फसलों की वर्तमान उत्पादकता में वृद्धि की सम्भावनायें है।

(2) प्रदेश में पर्याप्त वर्षा होती है परन्तु वर्षा जल का वितरण असमान है। समुचित जलागम प्रबन्धन एवं वर्षा जल संभरण से सिंचन क्षेत्रफल को बढ़ाया जा सकता है।

(3) असिंचित क्षेत्रों बंजर तथा परती भूमि में परम्परागत, दलहनी, तिलहनी, औषधीय, सगन्ध एवं भौगोलिक आवश्यकतानुसार फसलों की विकसित कृषि की जा सकती है ताकि प्रदेश की मांग को पूर्ण करने के साथ–साथ दूसरे राज्यों की माँग की आपूर्ति करने में भी समर्थ होगा।

(4) फसल प्रबन्धन तथा विविधिकृत कृषि द्वारा कृषकों की आय वृद्धि की असीम सम्भावनायें हैं। इस हेतु संविदा कृषि को बढ़ावा देने की आवश्यकता होगी ताकि बाह्य निजी निवेश अवस्थापना एवं विपणन हेतु आकर्षित हो सके।

(5) अधिक मूल्य की फसलों जैसे– बेमौसमी सब्जियों, यूरोपियन सब्जियों, विभिन्न प्रकार के फलों की खेती, जड़ी बूटी की खेती, परम्परागत पौष्टिक अनाजों एवं जैविक खेती सम्भव है, जिनमें उत्पादन कम होने पर भी कृषक को लागत के सापेक्ष अधिक कीमत प्राप्त होती है।

(6) पर्याप्त पौष्टिक पोषक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य सुरक्षा प्रदान करने वाले मोटे अनाजों जैसे मंडुवा, रागी, रामदान, कुट्टू, झंगोरा, कौणी, गहथ आदि की सम्पन्न तबके के लोगों में तथा विदेश में माँग बढ़ रही है। इनके स्थानीय स्तर पर ही प्रसंस्करण एवं बेहतर विपणन सुविधाओं का विकास कर कृषकों को अधिक मूल्य दिलाया जा सकता है। इनसे कृषिक विविधता की सुरक्षा के साथ–साथ कृषकों की आमदनी भी बढ़ेगी।

(7) प्रदेश के सम्पूर्ण पर्वतीय क्षेत्रों को जैविक कृषि के अन्तर्गत लाया जा सकता है क्योंकि जैविक उत्पादों का काफी अधिक मूल्य देश एवं विदेशों में प्राप्त होता है।

(8) उन्नतशील बीजों का उत्पादन कर अन्य प्रदेशों को बीज आपूर्ति करने से प्रदेश को बीज प्रदेश का गौरव प्राप्त हो सकता है।

(9) पशुपालन एवं मत्स्य पालन को एकीकृत कृषि का अभिन्न अंग बनाते हुये आय तथा रोजगार का अधिकाधिक सृजन किया जा सकता है।

(10) बेमौसमी सब्जियों का उत्पादन कर अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

4. आशंकायें:–

(1) बढ़ती जनसंख्या एवं घटती हुई कृषि भूमि के कारण कृषि उत्पादन पर दबाव बढ़ रहा है। जिससे दीर्घकालीन परिपेक्ष्य में खाद्य सुरक्षा पर अत्यन्त प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

(2) मृदा कार्बन का स्तर मैदानी क्षेत्रों में तेजी से घट रहा है। इस कारण मृदा स्वास्थ्य में उत्तरोत्तर ह्यस हो रहा है।

(3) नकदी फसलों के क्षेत्र में वृद्धि से खाद्य सुरक्षा फसलों के क्षेत्र में कमी हो सकती है।

(4) पृथ्वी के लगातार बढ़ते तापमान के कारण जलवायु चक्र में परिवर्तत दृष्टिगोचर होने लगे हैं। पर्वतीय क्षेत्रों की पारिस्थितिकी अत्यन्त्र भंगुर है। जलवायु चक्र में सूक्ष्म परिवर्तन भी कृषि उत्पादन को काफी हद तक प्रभावित करेंगे। यदि ऐसी फसल प्रजातियों का जो जैविक और अजैविक तनावों को सहने में सक्षम है, का विकास समय रहते नहीं किया गया तो भविष्य में अत्यन्त दुरूह समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

(5) पर्वतीय क्षेत्रों में कुल कृषि भूमि का 54 प्रतिशत भाग है। नियोजन एवं सुविधाओं के अभाव में दिन प्रतिदिन कृषि भूमि बंजर होती जा रही हैं जो कि भविष्य के लिये बहुत बडी चुनौती है।

(6) जंगली जानवरों खेती को नुकसान, अलाभकारी वर्षा आधारित कृषि आदि से बढ़ते हुये पलायन के कारण पर्वतीय भू–भाग की कृषि बंजर में तब्दील होती जायेगी तथा इस क्षेत्र की जनसंख्या भी कम होती जायेगी जो कि सीमांत क्षेत्र के लिये बड़ी समस्या बन सकती है।

5. प्राथमिकतायें :–

(1) मृदा स्वास्थ्य सुधार हेतु प्रत्येक कृषक को मृदा स्वास्थ्य कार्ड उपलब्ध कराना।

(2) पर्वतीय क्षेत्रों में मृदा एवं नमी संरक्षण तथा वर्षा जल संभरण।

(3) गदेरों छोटे–छोटे शटरयुक्त चेकडेम बनाकर पानी को संचित करना।

(4) लघु एवं सीमान्त कृषकों के लाभ के लिए क्लस्टर आधारित कृषि को विकसित करना जिसके अन्तर्गत फार्म इकोनोमिक मॉडलों का विकास तथा इनका प्रसार। बाजार मांग पर आधारित कृषि विविधीकरण इसका एक मुख्य अंग होगा।

(5) सिंचाई एवं जल प्रबन्धन हेतु सृजित सुविधाओं का बेहतर रख–रखाव एवं नई सूक्ष्म सिंचाई तकनीकों को अपनाया जायेगा।

(6) फसल उत्पादन से संबन्धित समस्याओं का अभिज्ञान एवं उनके निवारण हेतु कृषि शोध, कृषि शिक्षा एवं कृषि प्रसार तन्त्र में सुधार।

(7) बीज एवं पौध रोपण सामग्री के मानक एवं गुणवत्तायुक्त उत्पादन तथा वितरण पर विशेष बल दिया जायेगा।

(8) पर्वतीय क्षेत्रों में स्वैच्छिक चकबन्दी/सामूहिक कृषि/संविदा कृषि/सहकारी कृषि/क्लस्टर कृषि को प्रोत्साहन।

(9) एकीकृत कृषि पद्धति को अपनाते हुये कृषि, वानिकी, औद्यानिकी, मत्स्य पालन, पशुपालन, जड़ी बूटी, मशरूम उत्पादन, मौन पालन, सगन्ध पौधों की खेती, रेश्म उत्पादन आदि के विकास हेतु क्षेत्रगत विशेषताओं के सापेक्ष दीर्घकालीन क्षेत्रीय नियोजन तथा क्रियान्वयन।

(10) कृषि तकनीकों, राजकीय योजनाओं के व्यापक प्रचार प्रसार हेतु ग्राम स्तर तक प्रसार व्यवस्था सुनिश्चित करना।

(11) उत्पादन लागत में कमी लाने, समयबद्ध कृषि, उच्च तकनीकों का प्रयोग, श्रम की बचत तथा महिला कृषकों सहायता हेतु कृषि यंत्रीकरण को अपनाना जिसके लिये अधिक से अधिक फार्म मशीनरी बैंकों की स्थापना।

(12) प्रदेश में विशेष कृषि क्षेत्रों की स्थापना तथा कृषि एवं कृषि कलापों पर आधारित उद्योगों को प्रोत्साहन।

(13) किसान को उनके उपज का उचित मूल्य दिलाने हेतु प्रयास किये जायेंगे। कृषि विपणन में नीतिगत एवं संस्थागत सुधार। निजी प्रयासों को प्रोत्साहन।

(14) कृषकों में इलैक्ट्रोनिक साक्षरता, फसल गुणवत्ता साक्षरता तथा विपणन साक्षरता का विकास।

(15) फसल एवं फसलोत्तर प्रबन्धन हेतु आधारभूति सुविधाओं जैसे कृषि ऋण, फसल बीमा, विपणन केन्द्र, भण्डारण एवं संग्रह केन्द्र, शीत गृह, दुग्ध एवं मत्स्य ग्रिड, कूलचेन, खाद्य प्रसंस्करण सुविधओं आदि का विस्तार प्रबन्धन किया जायेगा।

(16) प्रत्येक न्यायपंचायत पर ग्रोथ सेन्टर स्थापित किया जायेगा।

(17) परम्परागत पौष्टिक अनाजों, दलहन/तिलहन, औषधीय एवं सगंध पादपों, बे–मौसमी तथा यूरोपीय सब्जियों, मशरूम, शीत जल मात्स्यिकी, दुग्ध प्रसंस्कृत उत्पादों को विशेष प्रोत्साहन। पर्वतीय क्षेत्रों के परम्परागत फसल उत्पादन से निर्मित उत्पादों जैसेः– प्रसाद, स्वास्थ्यकर खाद्य सामग्रियों, औषधियों आदि का विशेष प्रसार किया जायेगा। प्रसाद तथा निरामिष भोजन का धार्मिक पर्यटकों के मध्य विशद् प्रचार–प्रसार किया जायेगा। इससे कृषकों को प्रतिवर्ष लगभग 500 करोड़ रूपये की अतिरिक्त आय हो सकती है।

(18) महिलाओं एवं बेरोजगार युवकों को कृषि/कृषि पर आधारित उद्योग/कृषि पर्यटन आदि में स्वरोजगार हेतु प्रेरित एवं प्रोत्साहित करना। कृषि व्यवसाय को महिलाओं के प्रबन्धन एवं भागीादारी के अनुसार विकसित किया जायेगा।

(19) अन्तर्राष्ट्रीय एवं अन्तर्देशीय बाजारों के अनुरूप कृषि उत्पादों की गुणवत्ता सुनिश्चित की जायेगी। साथ ही परम्परागत उत्पादों को इन बाजारों में पहचान दिलाने का प्रयास किया जायेगा।

(20) फसल उत्पादन, कृषि प्रसार एवं विपणन में निजी क्षेत्र को सहयोग के लिए आकर्षित करने हेतु उपयुक्त वैधानिक सुधार किये जायेंगे तथा पब्लिक प्राईवेट पार्टिशिपेशन (PPP) विधा में योजनाओं के निर्माण को प्रोत्साहन दिया जायेगा।

(21) पर्यावरण संतुलन बनाए रखने हेतु कृषि उत्पादन में टिकाऊपन सुनिश्चित किया जायेगा।

(22) पर्वतीय असिंचित कृषि क्षेत्रों को वर्ष 2020 तक पूर्ण रूप से जैविक कृषि से आच्छादित किया जायेगा।

(23) बारानी कृषि, हाइड्रोपोनिक्स, पुष्प कृषि, मात्स्यिकी, कृषि आर्थिकी, कृषि व्यवसाय प्रबन्धन, फसलोत्तर प्राविधिकी एवं फार्म आर्थिक मॉडल के विकास के लिए बहुविधीय कृषि में शोध एवं शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जायेगा।

(24) कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा नई तकनीकियों का प्रचार प्रसार एवं प्रशिक्षण कृषकों के मध्य किया जायेगा।

कृषि नीति 2018 के उद्देश्य

1. संकल्प से सिद्धि के तहत वर्ष 2022 तक कृषकों की आय दोगुना करना।
2. सतत कृषि विकास को बढ़ावा देना।
3. परम्परागत फसलों, फल, सब्जियों, अनाज, तिलहन तथा दलहन के मूल्य सम्वर्द्धन, सुरक्षित भण्डारण करते हुये खाद्य प्रसंस्करण से जोड़ना।
4. परती/बंजर भूमि का समुचित प्रबंधन करना।
5. मोटे अनाज एवं पौष्टिक अनाज के उत्पादन, उपभोग, प्रसंस्करण मूल्यवर्द्धन को बढ़ावा देकर विपणन की व्यवस्था करना।
6. कृषि तथा रेखीय विभाग विशेषकर उद्यान, चाय बगान, सगन्ध पौध को पारिस्थितिकी पर्यटन से जोड़ना।
7. प्रदेश में चकबन्दी/स्वेच्छिक चकबन्दी को प्रोत्साहित करना।
8. परिशद्ध खेती (Precision Agriculture) तथा संरिक्षत खेती (Protective Agriculture) को बढ़ावा देना।
9. जड़ी–बूटी की खेती, मशरूम उत्पादन तथा मौन पालन को बढ़ावा देना।
10. कृषि एवं रेखीय विभागों के उत्पादों हेतु उचित एवं सुगम विपणन व्यवस्था सुनिश्चित करना। ग्रामीण हाट/कलेक्शन सेन्टरों को ई–नाम से जोड़ना।
11. स्थानीय फसलों के न्यूनतम सुनिश्चित मूल्य (Minimum Assured Price) घोषित करना।
12. जल संरक्षण, नमी संरक्षण, स्प्रिंकलर एवं ड्रिप इरीगेशन से सिंचन क्षेत्रफल में वृद्धि करना।

नीति एवं रणनीति

1. एकीकृत कृषि पद्धति को अपनाना

1.1. कृषकों को उपलब्ध परिसम्पति जैसे कि भूमि, पशुधन, मत्स्य तालाब, घरेलू फार्म का समुचित प्रबन्धन कर किसी उद्यम अथवा बाजार प्रेरित दक्षता के माध्यम से दीर्घकालिक आय बढ़ाने की दिशा में कार्य किया जायेगा। एकीकृत कृषि पद्धति एवं कृषि विविधिकरण को प्रोत्साहित किया जायेगा, जिसमें कृषि एवं कृषि से जुड़े रेखीय विभागों द्वारा आपसी समन्वय से कार्य किया जायेगा।

कृषि	लघु उद्योग
उद्यान एवं खाद्य प्रसंस्करण	मौन पालन
जड़ी–बूटी	मशरूम उत्पादन
सगन्ध पौध	जलागम विभाग
रेशम	आई0एफ0ए0डी0–आई0एल0एस0पी0
पशुपालन	नाबार्ड
दुग्ध विकास	ग्राम्य विकास–मनरेगा
मत्स्य पालन	स्किल डेवलपमेन्ट मिशन
गन्ना एवं चीनी विकास	कृषि विश्वविद्यालय एवं संस्थान
सहकारिता	कृषि विज्ञान केन्द्र
सिंचाई एवं जल प्रबन्धन	कृषि विपणन

क्षेत्र विशेष के अनुसार एकीकृत कार्ययोजना तैयार कर संचालित की जायेंगी।

2. कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने की रणनीति :

2.1. **मृदा स्वास्थ्यः** खेत की उत्पादकता को बढ़ाने की कुंजी मृदा स्वास्थ्य में संवर्द्धन है। प्रत्येक किसान परिवार को एक मृदा स्वास्थ्य कार्ड सुनिश्चित तौर पर उपलब्ध कराया जायेगा, जिसमें तकनीकी परामर्शों के साथ–साथ उनके खेतों की मिट्टी के सम्बन्ध में समेकित जानकारी दी जाएगी। मिट्टी में फसल के अवशिष्टों को शामिल करके मृदा जैव (आर्गेनिक) पदार्थ में वृद्धि की जाएगी। इस हेतु समय–समय पर राज्य की मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं का सुदृढ़ीकरण किया जायेगा। मृदा स्वास्थ्य कार्ड को आधार कार्ड एवं भूमि के विवरण से जोड़ा जायेगा, जिससे उर्वरक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रयोग किया जायेगा। मृदा स्वास्थ्य कार्ड में दी गयी संस्तुतियों को व्यवहारिक रूप से प्रयोग में लाने हेतु कृषकों को प्रोत्साहित किया जायेगा, जिससे मृदा स्वास्थ्य का सम्वर्द्धन होने के साथ–साथ किसान उर्वरकों पर होने वाले अनावश्यक खर्च से भी बच सकेंगे। मृदा परीक्षण के आधार पर कृषकों को सन्तुलित उर्वरकों का प्रयोग करने हेतु जानकारी दी जायेगी। उर्वरकों का वितरण शत–प्रतिशत डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर (डी0बी0टी0) योजना के तहत पी0ओ0एस0 मशीन के माध्यम से किया जायेगा। सूक्ष्म तत्वों के प्रयोग को प्रोत्साहित किया जायेगा।

2.2. **बीजः** उत्तम कोटि के बीज और रोग मुक्त रोपण सामग्री जिसमें इन–विट्रो कल्वर्ड प्रोपेगुल्स शामिल हैं, फसल उत्पादकता और सुरक्षा के लिए अनिवार्य है, का वितरण कृषकों को किया जायेगा। परस्पर रूप से लाभप्रद कृषक बीज कम्पनी में कृषकों की भागीदारी को बढ़ावा दिया जाएगा। कृषि विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थानों द्वारा प्रदेश की भौगोलिक स्थिति के अनुसार नवीनतम प्रजातियां तथा विभिन्न फसलों की सघन पद्धतियां विकसित की जायेगी। प्रदेश हेतु सीड रोलिंग प्लान के अनुसार बीज प्रतिस्थापन दर की पूर्ति की

जोयगी। गुणवत्तायुक्त बीज उपलब्ध कराये जाने हेतु समय–समय पर बीज नमूनों को ग्रहित कर परीक्षण कराया जायेगा। गुणवत्तायुक्त बीजों की माँग की पूर्ति हेतु बीज उत्पादन प्रक्षेत्रों की सम्भावना को तलाशते हुए सीड हब के रूप में विकसित किया जायेगा। स्थानीय एवं परम्परागत गुणवत्तायुक्त बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित की जायेगी।

2.3. कीटनाशीः कीटों, रोगजनकों और खरपतवार तीनों के कारण प्रत्येक वर्ष फसल की काफी हानि होती है। पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित और कारगर कीटनाशों के प्रयेाग को प्राथमिकता दी जाएगी। रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग को एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम) पद्धति में शामिल किए जाने की जरूरत है। उपयक्त गुणवत्ता नियंत्रण, सुरक्षा आकलन व अन्य विनियामक पद्धतियों को मजबूत किया जाएगा। गुणवत्ता युक्त कीटनाशकों की ब्रिकी सुनिश्चित की जायेगी। पूर्ण रूप से घोषित जैविक विकासखण्डों तथा योजनान्तर्गत चयनित जैविक क्लस्टरों में जैव उर्वरक एवं जैव रसायनों का प्रयोग सुनिश्चित किया जायेगा।

2.4. कृषि यन्त्रीकरणः किसानों को क्षेत्र और फसल विशिष्ट मशीनों और यंत्रों की जरूरत होती है ताकि वे सही समय पर फसल बोने और खरपतवार का प्रबंधन करने व फसलोत्तर कार्य में सुधार करने का काम कर सके। महिलाओं को विशेष रूप से अपने अनुकूल ऐसे यंत्रों की जरूरत होती है, जिनमें मेहनत कम लगे, उत्पादन बढ़े, समय की बचत हो तथा यन्त्रों का उपयोग सरलता से किया जा सके। कृषकों को फार्म मशीनरी बैंक एवं कस्टम हायरिंग सेन्टर के माध्यम से स्थानीय आवश्यकता के अनुसार यंत्र, औजार, मशीनरी, ट्रैक्टर व अन्य बड़े फार्म यंत्र उपलब्ध करायें जायेगें ताकि कृषकों को सस्ते किराये पर अपनी आवश्यकता के यन्त्र उपलब्ध हो सकें। महिला कृषकों के श्रम की बचत के साथ–साथ उत्पादन लागत को कम किया जायेगा। कृषि यंत्र के उपयोग तथा फार्म मशीनरी बैंक आदि से रोजगार प्रदान किया जायेगा जिससे उनके आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके। अधिक से अधिक कृषकों एवं दूरस्थ क्षेत्रों फार्म मशीनरी बैंकों के माध्यम से यंत्रीकरण की सुविधा उपलब्ध करायी जायेंगी।

2.5. सिंचाई एवं जल प्रबन्धन –

2.5.1. सिंचाई के लिये सही समय पर और पर्याप्त मात्रा में जल की अनुपलब्धता एक गम्भीर समस्या है। आश्वस्त सिंचाई कृषि के लिये आवश्यक है। प्रदेश में वर्षा जल का वितरण अत्यन्त असमान है। अतः वर्षा जल संचयन तथा जल का कुशलतापूर्वक तकनीकी उपयोग महत्वपूर्ण है। जल का 10 से 15 प्रतिशत संचय कर काफी क्षेत्रफल में फसलों के लिये जीवन रक्षक सिंचाई की व्यवस्था की जा सकती है। पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षा जल का संचय शटरयुक्त चैक डैम, तालाबों एवं टैंकों आदि से किया जायेगा। मैदानी क्षेत्रों तथा घाटियों में नहरों तथा भू–जल से सिंचाई होती है, परन्तु भू–जल का स्तर तेजी से गिरता जा रहा है, जिसके लिये वर्षा जल संचयन और जलाशयों के पुर्नभरण को प्राथमिकता दी जायेगी।

2.5.2. जल एक सार्वजनिक संसाधन है न कि निजी सम्पति। अतः जल तक पहुंच के लिए न्यायोचित और समानता तंत्र विकसित करने तथा जल संसाधनों के प्रबन्धन में स्थानीय लोगों को शामिल करने को प्राथमिकता देनी होगी। महिलाओं को जल प्रयोक्ता के रूप में पहुंच और प्रबन्धन दोनों में एक भूमिका निभानी होगी।

2.5.3. जल उपलब्धता में वृद्धि और इसका समुचित उपयोग करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाएंगे–

(1) आपूर्ति की स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए वर्षा जल संचयन और जलाशय पुनःभरण को प्राथमिकता दी जाएगी। भूजल विकास और प्रबंधन को विनियमित और नियत्रित करने के लिए एक आवश्यक उपाय किए जाएंगे।

(2) सभी मौजूदा श्रोतों, कुओं, तालाबों का जीर्णोद्धार किया जायेगा।

(3) शटरयुक्त चेकडेमों के निर्माण पर जोर दिया जायेगा ताकि छोटे–छोटे गदेरों के पानी को एकत्र कर सिंचाई में प्रयोग में लाया जा सकता है।

(4) आधुनिक सिंचाई पद्धतियों, जिनमें छिड़काव व ड्रिप सिंचाई आदि शामिल हैं, से जल उपयोग दक्षता बढ़ाई जायेगी। पंचायतों अथवा संगठन के माध्यम से मांग प्रबन्धन पर प्राथमिकता के आधार पर ध्यान दिया जायेगा।

(5) सतही जल भू–जल संसाधनों का एकीकृत और समन्वित विकास तथा उनके संयुक्त उपयोग को परियोजना नियोजन के प्रारम्भ से ही किया जाऐगा और इसे परियोजना कार्यान्वयन का एक अभिन्न अंग बनाया जायेगा।

(6) जल दुर्लभ क्षेत्रों में उच्च मूल्य तथा न्यून जल चाहने वाली फसलों/प्रजातियों जैसे कि दालें और तिलहन की खेती के लिए उपयोगी पद्धति पर बल दिया जायेगा।

(7) केन्द्र राज्य सरकारों द्वारा की गयी पहल के माध्यम से कार्यक्रम के बीच परस्पर तालमेल स्थापित किया जायेगा ताकि जल उपयोग क्षमता और जल संरक्षण उपायों का सम्वर्द्धन किया जा सके।

(8) नहर एवं गूलों के स्थान पर एच0डी0पी0ई0 पाईपों का उपयोग किया जायेगा।

2.6. **परम्परागत फसलों की खेती**–पर्वतीय क्षेत्रों में उगाई जाने वाली परम्परागत फसलें जैसे मंडुवा, सांवां, रामदाना, गहथ, उगल/फाफर आदि फसलें पौष्टिक एवं औषधीय गुणों से भरपूर हैं। यह फसलें कम पानी में जैविक कृषि के आधार पर स्थानीय परिस्थिति में उगाने हेतु उपयुक्त हैं। इन फसलों की खेती को प्रोत्साहित किया जायेगा। इन फसलों के उत्पादन, विपणन, प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्द्धन की समुचित व्यवस्था की जायेगी।

2.7. **कलस्टर आधारित कृषि** – प्रदेश में 91 प्रतिशत लघु एवं सीमान्त कृषकों को देखते हुये क्लस्टर आधारित कृषि को बढ़ावा देने की आवश्यकता है ताकि अधिक उत्पादन प्राप्त कर विपणन से कृषकों को उचित मूल्य मिल सके। विशेषकर पर्वतीय क्षेत्रों में जहां पर चकबन्दी नहीं है, कृषक समूहों द्वारा स्वयं सहकारिता के आधार पर क्लस्टर आधारित कृषि को प्रोत्साहित करने के लिये विशेष कार्यक्रम चलाया जायेगा। क्लस्टर में उन सभी कृषकों के खेत सम्मिलित होंगे जो कि वर्तमान में ग्राम में निवास नहीं कर रहे हैं। ताकि परती/बंजर कृषि भूमि उपयोग में लायी जा सके। स्वैच्छिक चकबन्दी को प्रोत्साहित किया जायेगा।

2.8. **पारिस्थितिकी पर्यटन**– कृषि, औद्यानिकी एवं जड़ी–बूटी तथा अन्य क्लस्टरों में प्राकृतिक सामंजस्य स्थापित करते हुये पारिस्थितिकी पर्यटन (Eco Tourism) को बढ़ावा दिया जायेगा।

2.9. जंगली जानवरों द्वारा कृषि एवं कृषक को क्षति पहुँचाये जाने की स्थिति में वन विभाग द्वारा उचित क्षतिपूर्ति दी जायेगी।

2.10. **विस्तार, प्रशिक्षण और ज्ञान सम्पर्कता**–वैज्ञानिक जानकारी और फील्ड स्तरीय कार्य के बीच अंतराल को दूर किया जाएगा जिससे फार्म उत्पादकता और लाभप्रदता में वृद्धि हो सके। कृषि विज्ञान केन्द्र

फसलोत्तर प्रौद्योगिकी कृषि प्रसंस्करण व प्राथमिक उत्पादों के मूल्यवर्द्धन के क्षेत्र में प्रशिक्षण देंगे व प्रयोगशाला से खेत तक प्रदर्शनों का आयोजन करेंगे ताकि गांवों में रोजगार का सृजन करते हुये पलायन को रोका जा सके। उत्कृष्ट/प्रगतिशील किसानों के खेतों में फार्म स्कूलों की स्थापना करके कृषकों के मध्य नवीनतम तकनीकी जानकारियों का प्रचार–प्रसार किया जायेगा। कृषि विज्ञान केन्द्रों के सहयोग से फसल, पशुपालन, मत्स्यकी और कृषि वानिकी के प्रौद्योगिकी उन्नयन की प्रक्रिया में तेजी आएगी। आधुनिक कृषि प्रणालियों एवं संचार सुविधाओं के माध्यम से किसानों, संसाधकों, खुदरा विक्रेताओं और अन्य पणधारियों को साथ–साथ लाने के प्रयास किये जाएंगे। विशेष रूप से जिला स्तर पर और उसके नीचे विस्तार प्रयासों का समेकन सुनिश्चित किया जाएगा। छोटे एवं सीमान्त जोत क्षेत्रों की कार्यकुशलता और व्यवहार्यता में सुधार करने के लिए किसानों को सही समय और स्थान से ही सूचना देकर अधिक सम्पर्क करना जरूरी है। जन संचार साधनों, विशेष रूप से रेडियो दूरदर्शन और स्थानीय भाषा के समाचार–पत्रों की इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण भूमिका होगी। किसान कॉल सेन्टर के माध्यम से अधिक से अधिक कृषकों की समस्या का समाधान किया जायेगा।

2.11. कृषि मूल्य, विपणन और व्यापार–कृषि उत्पादकता और लाभप्रदता बढ़ाने में आश्वस्त और लाभप्रद विपणन अवसर प्रदान करना सतत प्रगति का मुख्य पहलू है। किसानों को अपना उत्पाद बेचने, सहकारिताओं सहित निजी क्षेत्र के बाजार विकसित करने के लिये छूट देने, उपभोक्ताओं, संसाधकों, खुदरा पूर्तिकर्त्ताओं/निर्यातकों को सीधे ही बिक्री करने के लिए प्रोत्साहित करने और भ्रष्टाचार और उत्पीड़न को दूर करने के लिए और अधिक अवसर मुहैया कराने की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित उपाय किए जाएगेः–

(1) न्यनूतम समर्थन मूल्य (एम एस पी) पद्धति को अधिक प्रभावी ढंग से कार्यान्वित किया जाएगा।

(2) बाजार हस्तक्षेप स्कीम (एम आई एस) को आकस्मिकताओं की स्थिति में विशेष रूप से वर्षा पोषित क्षेत्रों में संवेदनशील फसलों के मामले में शीघ्रता से अमल में लाने के लिए सुदृढ़ किया जाएगा।

(3) सामुदायिक खाद्यान्न बैंकों की स्थापना को बढ़ावा दिया जायेगा, जिससे अल्प प्रयुक्त फसलों के विपणन में मदद मिलेगी और इस प्रकार कृषि जैव विविधता के संरक्षण में आर्थिक विकास को बल मिलेगा।

(4) सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पी डी एस) के नेटवर्क के जरिए पोषक मिलेट्स जैसे कि मंडुवा, सांवा, रामदाना आदि का भण्डारण करने व बेचने के जरिए खाद्य सुरक्षा समूह (बास्केट)का विस्तार किया जायेगा।

(5) आन्तरिक प्रतिबन्ध में छूट देकर एकल राष्ट्रीय बाजार का विकास करने के प्रयास किये जायेंगे। किसानों की आय वृद्धि में बाधक सभी नियंत्रणों और विनियमों की समीक्षा की जायेगी और उन्हें हटाया जाएगा।

(6) सार्वजनिक–निजी सहभागिता पद्धति में कृषि के लिये टर्मिनल मंडियों का विकास किया जायेगा। गुणवत्ता और मांग के अनुकूल उत्पादन के लिए अपेक्षित तकनीकी समर्थन सेवाएं प्रदान करने के लिए चले आ रहे पुराने संपर्को को कायम रखना और पारदर्शी व्यापार परिवेश में बेहतर मूल्य वसूलने के लिए किसानों का बाजार तक पहुंच बनाए रखना।

(7) कृषि उत्पाद बाजार समितियों और राज्य कृषि विपणन बोर्डों के कार्यों को मात्र नियमन कार्यों से रूपांतरित किया जाएगा ताकि स्थानीय उत्पादों के लिये ग्रेडिंग, ब्राडिंग एवं पैकेजिंग तथा बाजारों के विकास को बढ़ावा दिया जा सके।

(8) किसानों को उनके उत्पाद के लिए लाभप्रद कीमतों से और उपभोक्ताओं को खाद्यान्नों के लिए उचित और वहनीय कीमतों के अनुसार न्याय सुनिश्चित करने के दोहरे लक्ष्य को (चूँकि किसान भी उपभोक्ता) निम्नलिखित समेकित कार्यनीति के माध्यम से प्राप्त किया जाएगा।

1. एम. एस. पी. सम्बन्धी निर्णय लेते समय सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि किसानों के उत्पादों के लिए उन्हें लाभपद्र मूल्य प्राप्त करवाने के मामले में उनके हितों की पर्याप्त सुरक्षा की गई हैं।
2. वर्षा सिंचित क्षेत्रों में एम एस पी के प्रभावी क्रियान्वयन सहित स्थायी एवं कुशल प्रभावी विपणन परिवेश से बारानी खेती में उत्पादकता और आय में सुधार होगा।
3. प्रत्येक न्यायपंचायत/क्लस्टर स्तर पर एक ग्रोथ सेन्टर बनाया जाएगा तथा उसे ई–नाम से जोड़ा जायेगा तथा प्राईवेट मार्केटिंग को बढ़ावा दिया जायेगा।

3. कृषि ऋण एवं फसल बीमा

3.1. **कृषि ऋण** –ग्रामीण बैकिंग प्रणाली की कार्यकुशलता और पहुंच (आउटरीच) में सुधार की आवश्यकता है। इसके लिये किसानों को उचित ब्याज दर पर वित्तीय सेवाएं सही समय पर पर्याप्त मात्रा में और सरलता से पहुॅचनी चाहिए। बैंकिंग प्रणाली के अन्तर्गत कृषि के स्तर को ऊँचा उठाने, ग्रामीण और कृषि–व्यवसाय उद्यमों और रोजगार के विकास को बढ़ावा देने के लिए अपेक्षित बड़ी ऋण क्षमता का पता लगाने और वित्तीय व्यवस्था करने के लिए कदम उठाए जाएगें। समूह स्तर पर नियोजन के आधार पर ऋण उपलब्ध कराया जायेगा। किसानों को बेहतर संस्थागत ऋण दिलाने के लिए किसान क्रेडिट कार्ड स्कीम के तहत किसानों का व्यापक कवरेज किया जायेगा।

3.2. **फसल बीमा–** चूँकि कृषि अत्यधिक जोखिम वाला एक आर्थिक कार्यकलाप है। अतः किसानों को उपभोक्ता–अनुकूल बीमा साधनों की जरूरत है, जिनके अन्तर्गत उत्पादन अर्थात बुवाई से लेकर फसलोत्तर कामकाज को शामिल किया गया है। बीमे में किसानों को वित्तीय संकट से बचाने के लिए सभी मुख्य फसलों के सम्बन्ध में मण्डी जोखिम शामिल किया जायेगा और इस प्रकार कृषि को वित्तीय रूप से व्यवहार्य बनाया जाएगा। अधिक से अधिक ऋणी एवं अऋणी कृषकों को बीमा से जोड़ा जायेगा। बीमित फसल की क्षति का भुगतान कृषकों को तत्काल करने का प्रयास किया जायेगा। गांवों में ऋण और बीमा दोनों प्रकार की जानकारियां प्रसार कार्यकर्ताओं एवं चौपाल के माध्यम से दी जायेंगी।

4. सहकारी समितियां

बैकिंग, आदान आपूर्ति विपणन, कृषि–प्रसंस्करण और अन्य कृषि–व्यवसायों में सहकारी समितियों की एक महत्वपूर्ण भूमिका है, जिससे किसानों को आदानों की आपूर्ति उत्पादन, मूल्यसंवर्द्धन और विपणन में विद्यमान विसंगतियों से बचाया जा सकता है। सहकारी समितियों को उपयुक्त तंत्र बनाना चाहिए जिनके जरिए किसान बाजार माध्यमों पर अधिक नियंत्रण प्राप्त कर सकें तथा सहकारी समितियों तथा स्वयं सहायता समूहों के जरिए लाभ के बेहतर अवसर प्राप्त कर सकें। आर्थिक उदारीकरण और बाजार प्रतिस्पर्द्धात्मकता को देखते हुए, सहकारी समितियों को व्यवसायी रूप से सक्षम बनाया जायेगा। चुने गए सदस्यों और प्रबंधकों के कार्य का स्पष्ट रूप से सीमांकन किया जाएगा। लेखा परीक्षा तथा लेखा पद्धतियों में भी सुधार किया जाएगा और उसे पारदर्शी बनाया जाएगा, जिससे कि सहकारी समितियों के सभी सदस्यों को अधिक विश्वास दिलाया जा सके।

5. जैविक कृषि

5.1. किसानों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए और जैविक खेती में वैज्ञानिक उत्पादन बढ़ाने के लिए उच्चस्तरीय बहु–विषयक प्रयास किये जायेंगे। फसल–पशुधन–मत्स्य, औद्यानिक आदि में एकीकृत उत्पादन पद्धतियों के अन्तर्गत जैविक खेती के सिद्धान्त और विधियों को अपनाने की सम्भावनाएं हैं। प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्र को पूर्ण रूप से जैविक बनाया जायेगा तथा मैदानी क्षेत्र को क्रमबद्ध रूप से जैविक में परिवर्तित करने हेतु प्रयास किये जायेगें। परम्परागत फसलों की क्लस्टर आधारित कृषि की जायेगी। कृषि पशुपालन, जड़ी–बूटी आदि से सम्बन्धित सारे कार्य जैविक आधार पर संचालित होंगे।

प्रदेश का वर्षा पर आधारित पर्वतीय भू–भाग हरित क्रान्ति के दौर से लगभग अछूता रहा। हरित क्रान्ति क्षेत्रों की भाँति यहाँ उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि नहीं हुई, परन्तु प्रभूत जैव विविधता तथा नैसर्गिक परिवेश एवं साधन सुरक्षित रहे। कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता लगभग स्थिर रही। आधुनिक कृषि निवेशों के न्यूनतम उपयोग से कृषि लागत में भी हरित क्रान्ति क्षेत्रों की अपेक्षा अत्यन्त कम वृद्धि हुई। वर्तमान सन्दर्भ में ये कमियां ही जैविक कृषि तकनीकों के विकास के कारण नये अवसर के रूप में अवतरित हो रही है। जैविक कृषि से दीर्घकालिक खाद्य, पोषण एवं पर्यावरण सुरक्षा निश्चित की जा सकती है। प्रदेश के वर्षा पर आधारित भू–भाग नैसर्गिक स्थिति में होने अर्थात् रासायनिक प्रदूषण की अनुपस्थिति तथा सूक्ष्म जीवाणुओं की असंख्य प्रजातियों की उपस्थिति के कारण जैविक कृषि के आदर्श है।

5.2. **वर्तमान स्थिति** –राज्य के आविर्भाव के पश्चात् की गई उल्लेखनीय पहलों के कारण उत्तराखण्ड देश का अग्रणी जैविक प्रदेश बन गया है। वर्तमान तक 10 विकासखण्ड पूर्ण रूप से जैविक कृषि के अन्तर्गत आ गये हैं। शेष हेतु प्रयास किये जा रहे हैं।

5.3. **संस्थागत ढांचा–**

5.3.1. उत्तराखण्ड जैविक उत्पाद परिषद वर्ष 2003 में स्थापित हुआ। विभिन्न एजेन्सियों के मध्य समन्वय्, क्षमता विकास, योजना निर्माण, जैविक प्रमाणीकरण हेतु आन्तरिक नियंत्रण पद्धति के आधार पर कार्य तथा विपणन हेतु सुविधायें उपलब्ध कराना इसके दायित्वों में सम्मिलित है, साथ ही सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली (पी0जी0एस0) हेतु रीजनल काउन्सिल के रुप में नामित है।

5.3.2. उत्तराखण्ड जैविक अभिप्रमाणन अभिकरण वर्ष 2005 में स्थापित हुआ। यह पूरे देश में अपने प्रकार की एकमात्र एजेन्सी है। इसका कार्य जैविक प्रमाणीकरण तथा अभिलेखीकरण है। यह उत्तराखण्ड के अतिरिक्त अन्य राज्यों में कार्य कर रही है।

5.3.3. मझखाली (रानीखेत) के उत्कृष्टता केन्द्र को जैविक प्रशिक्षण एवं शिक्षण संस्थान के रूप में उच्चीकृत कर दिया गया है तथा यह एक जैविक पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित किया जा रहा है।

5.3.4. जैविक बासमती एवं जैविक स्थानीय फसलों के ग्राम समूहों में से प्रत्येक में किसानों के जैविक उत्पादक समूह गठित कर दिये गये है। इन समूहों से चयनित सदस्यों को सतत् प्रशिक्षण/पुर्नबोध प्रशिक्षण दिया जाता है।

5.3.5. विपणन के लिए कृषक अभिरूचि समूहों का गठन किया गया है तथा प्रत्येक वर्ष दो बार बड़े क्रेता–विक्रेता संगोष्ठी प्रदेश स्तर तथा ग्राम स्तर पर सत्र आयोजित किये जाते है।

5.4. **नीति / रणनीति**–इसके तीन प्रमुख तत्व है–

(1) प्राविधिकियों का सृजन एवं प्रसार

(2) जैविक प्रमाणन तंत्र विकसित करना

(3) विपणन नेटवर्क एवं तंत्र की स्थापना।

5.5. प्राविधकियों का सृजन एवं प्रसार– जैविक कृषि को बढ़ावा देने तथा इससे सम्बन्धित गतिविधियो को नियन्त्रित करने के लिए जैविक अधिनियम 2018, प्रख्यापन हेतु तैयार किया गया है। जैविक पद्धति के अन्तर्गत मिश्रित खेती हेतु विभिन्न कृषि जलवायिक परिस्थितियों के सापेक्ष लाभप्रद एग्रोनोमिक माडल का विकास एवं प्रसार किया जायेगा। जैविक कीट एवं बीमारियों के प्रभावी नियन्त्रण के लिए प्रचुर मात्रा में जैव नियंत्रकों (बायो कन्ट्रोल एजेन्ट) के उत्पादन को प्रोत्साहित किया जायेगा। कीट एवं रोगरोधी फसल प्रजातियों का चयन एवं इनकी सीड लाइन तैयार की जायेगी। परम्परागत ज्ञान तथा औषधीय पौधों का उपयोग पर्यावरण संरक्षण के लिये किया जायेगा।

स्थानीय फसल अवशेषों पत्तियों तथा अन्य अनुपयोगी जैविक सामग्रियों से कम्पोस्ट उत्पादन की पद्धतियों को बढ़ावा दिया जायेगा। कृषि उत्पादन लागत में कमी, पर्यावरण, भूमिगत जल प्रदूषण एवं जैव विविधता की सुरक्षा हेतु समेकित नाशीजीव प्रबन्धन को व्यापक रूप से अपनाया जायेगा, जिसके लिए विस्तृत प्रशिक्षण एवं प्रचार प्रसार सुनिश्चित किया जायेगा। जैविक कृषि को विभिन्न योजनाओं जैसे–सिंचन क्षमता में वृद्धि, जल सम्भरण, बीज उत्पादन, विपणन आदि से युगपतिकरण किया जायेगा।

5.6. जैविक प्रमाणन तंत्र का विकास

5.6.1. जैविक प्रमाणन की बाह्य निरीक्षण प्रणाली तथा सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली (पी0जी0एस0) दोनों व्यवस्थाओं से किया जाएगा।

5.6.2. मृदा तथा उपज के रासयनिक एवं जैनेटिक विश्लेषण हेतु प्रारम्भ में राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त प्रयोगशालाओं से नेटवर्किंग तथा भविष्य में आवश्यकता पाये जाने पर प्रदेश की अपनी उच्च स्तरीय प्रयोगशालाओं की सीापना की जायेगी।

5.6.3. प्रमाणन की प्रक्रिया का मानकीकरण किया जायेगा।

5.6.4. जैव प्रमाणन हेतु निरीक्षक तैयार करने हेतु शिक्षण/प्रशिक्षण की व्यवस्था की जायेगी।

5.6.5. खाद्य सुरक्षा एवं गुणवत्ता को विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा निर्धारित मानकों के अनुरूप लाया जायेगा।

5.6.6. कृषकों, उपभोक्ताओं तथा विपणन व्यावसायियों में खाद्य सुरक्षा साक्षरता का प्रसार किया जायेगा।

5.7. विपणन नेटवर्क एवं तंत्र का विकास

5.7.1. स्वयं सहायता समूहो एवं कृषक अभिरुचि समूहो में विपणन साक्षरता का व्यापक प्रचार प्रसार बाजार आधारित फसल नियोजन का प्रचार प्रसार किया जायेगा।

5.7.2. कृषक समूहो द्वारा महानगरों एवं प्रदेश के प्रमुख नगरो मे उपभोक्ता को सीधे विपणन सम्बन्धी सुविधाएं/ संस्थाए/व्यवस्थाएं सुनिश्चित की जायेंगी एवं स्थानीय ग्रामीण बाजारों को प्रोत्साहित किया जायेगा।

6. उद्यान एवं खाद्य प्रसंस्करण

6.1. वर्तमान स्थिति– राज्य की जलवायु एवं भौगोलिक स्थिति विभिन्न प्रकार के औद्यानिक फसलों (फल, सब्जी, मसाला, पुष्प, मशरूम तथा मौनपालन) के उत्पादन हेतु अत्यधिक अनुकूल है। विभाग द्वारा विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत इन फसलों के विकास हेतु व्यापक प्रयास किये जा रहे हैं। इस अनुकूलता के दृष्टिगत औद्यानिकी के समग्र विकास हेतु सामयिक प्रयास किये जा रहे हैं, परिणामस्वरूप उत्पादन, उत्पादकता एवं उपलब्धता में वृद्धि सम्भव हो सकी है।

वर्तमान में राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 59926 वर्ग किलोमीटर में से औद्यानिकी के अन्तर्गत 2. 83 लाख है0 क्षेत्र आच्छादित है, जिससे लगभग 2.50 लाख कृषक जुड़े हुए है, जिसमें 88 प्रतिशत लघु एवं मझौलें कृषक है। राज्य मे औद्यानिकी फसलों का वार्षिक व्यवसाय लगभग रू0 3200 करोड़ का है तथा राज्य के कृषि क्षेत्र के सकल घरेलू उत्पाद में औद्यानिकी (खाद्य प्रसंस्करण सहित) 30 प्रतिशत से भी अधिक भागेदारी है।

6.2. दृष्टि के सापेक्ष रणनीति–राज्य में औद्यानिकी का समग्र विकास करते हुये वर्तमान औसत उत्पादकता को वर्ष 2022 तक 25 प्रतिशत वृद्धि करना।

6.2.1. तुड़ाई पूर्व प्रबन्धन

(1) औद्यानिक क्रियाकलापों अपनाने हेतु जनजागरूकता एवं क्षमता/दक्षता विकास।

(2) क्लस्टर आधारित बागवानी को प्रोत्साहन।

(3) उत्पादन एवं उत्पादकता में गुणात्मक वृद्वि करना।

(4) संरक्षित खेती को बढ़ावा देना।

(5) बंजर पड़ी खेती युक्त भूमि का उपयोग औद्यानिक फसलों हेतु किया जाना।

(6) औद्यानिक यन्त्रीकरण को बढ़ावा देना।

(7) जैविक उत्पादन को बढ़ावा।

(8) सिंचन क्षमता में वृद्धि करना।

(9) कृषकों की फसलों को सुरक्षा प्रदान करना।

(10) विभागीय अवस्थापना सुविधाओं का कृषक हित में बेहतर प्रबंधन।

6.2.2 तुड़ाई उपरान्त प्रबन्धन

(1) औद्यानिक उपजों के सुगम परिवहन हेतु यथा आवश्यकता रोपवे की व्यवस्था।

(2) कृषकों को उनके उत्पादों का उचित मूल्य दिलाने हेतु आवश्यक अवस्थापना सुविधाओं यथा– संग्रहण ग्रेडिंग/पैकिंग केन्द्र, उचित भण्डारण की व्यवस्था, प्रसंस्करण एवं विपणन का सृजन एवं विपणन में सहयोग।

(3) सुदृढ़ वैकवर्ड एवं फारवर्ड लिकेंज विकसित करना

(4) मूल्य संवर्धन एवं प्रसंस्करण।

(5) औद्यानिकी उपजों के प्रसंस्करण हेतु राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार (खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय एवं कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय) द्वारा संचालित योजनाओं का बेहतर प्रचार प्रसार एवं प्रबंधन कर राज्य में औद्यानिकी आधारित प्रसंस्करण इकाईयों की स्थापना हेतु निजी क्षेत्र, एफ0पी0ओ0, सहकारी संस्थाओं एवं सार्वजनिक क्षेत्रों को प्रोत्साहन।

(6) तुड़ाई उपरान्त होने वाली क्षति को कम करते हुए उपलब्धता में वृद्वि करना।

6.2.2. तुड़ाई पूर्व एवं तुड़ाई उपरान्त प्रबन्धन के उपरोक्त घटकों को साम्यता पर लाते हुए मा0 प्रधानमंत्री जी के संकल्प से सिद्धि के अन्तर्गत वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने का सार्थक प्रयास करना।

6.3. नीति के प्रमुख घटक

6.3.1. जलवायु एवं परिस्थितियों के अनुरूप फसलों का चयन–प्रदेश के समस्त जनपदों में कलस्टर आधारित औद्यानिक निवेश एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों की स्थापना के लिये स्थानीय कच्चे माल की उपलब्धता एवं अनुकूलता के आधार पर चयन करना। साथ ही किसानों को उनकी उपज का समुचित मूल्य उपलब्ध कराने के उद्देश्य से निवेश स्थल विकसित किया जाएगा।

6.3.2. विभागीय अवस्थापना सुविधाओं का बेहतर प्रबंधन– विभागीय प्रादेशिक मौन पालन केन्द्र, मशरूम परियोजना, राजकीय खाद्य विज्ञान प्रशिक्षण केन्द्रों, उद्यान सचल दल केन्द्रों व विभागीय राजकीय उद्यानों/प्रक्षेत्रों का सुदृढ़ीकरण कर जनोपयोगी बनाते हुये दक्षता विकास कार्यक्रमों का प्रभावी रूप से संचालित किया जाएगा।

6.3.3. प्रक्रियाओं का सरलीकरण– नीति के अन्तर्गत उपलब्ध करायी जाने वाली सुविधाओं सम्बन्धी प्रक्रिया को सरल एवं सुगम बनाया जाएगा।

6.3.4. योजनाओं का व्यापक प्रचार–प्रसार– राज्य, जनपद, विकासखण्ड स्तर पर संगोष्ठी, कार्यशाला, प्रदर्शनी तथा प्रिन्ट एवं इलैक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से संचालित योजनाओं का व्यापक प्रचार–प्रसार तथा राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय आयोजनों में प्रतिभाग कर तकनीकी का आदान–प्रदान किया जायेगा।

6.3.5. अवस्थापना सुविधाओं का विकास–प्रदेश के उद्यान एवं खाद्य प्रसंस्करण विभाग के अन्तर्गत औद्यानिक विकास के लिये गुणवत्तापरक अवस्थापना सुविधाओं का विकास तथा औद्योगिक/औद्यानिक निवेश एवं रोजगार प्रोत्साहन नीति में आच्छादित अवस्थापना सुविधायें उद्यान एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों के लिये भी उपलब्ध कराया जाएगा।

6.3.6. पूंजी निवेशों का प्रोत्साहन–प्रदेश में उपलब्ध विविध जलवायु, उद्योगों हेतु अनुकूल वातावरण, उपलब्ध कुशल एवं अकुशल जनशक्ति सड़क, बिजली, पानी, कच्चे माल की प्रचुर उपलब्धता, निकटस्थ राष्ट्रीय बाजार के साथ–साथ राज्य एवं केन्द्र सरकार की विभिन्न योजनाओं के माध्यम से प्रदत्त सहायता के दृष्टिगत प्रदेश में निजी क्षेत्र में पूंजी निवेश को आकर्षित किया जाएगा।

6.3.7. दक्षता विकास–प्रदेश में औद्यानिकी के विभिन्न घटकों यथा मौन पालन, मशरूम उत्पादन एवं खाद्य प्रसंस्करण केन्द्रों का समुचित उपयोग कर इन क्षेत्रों में बेरोजगार युवकों/युवतियों को तकनीकी रूप से दक्ष बनाते हुए स्वरोजगार एवं रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने हेतु समूहों, एफ0पी0ओ0/समितियों से जोड़कर उत्पादन एवं उत्पादों के मूल्य संवर्द्धन प्रसंस्करण एवं विपणन की व्यवस्था में सहयोग प्रदान किया जाएगा।

6.4. **औद्यानिकी नीति का क्रियान्वयन**–नीति के क्रियान्वयन एवं अनुश्रवण हेतु नोडल संस्था उद्यान एवं खाद्य प्रसंस्करण निदेशालय होगा। इसके लिये निदेशालय में पृथक सैल बनाया जायेगा। नामित नोडल संस्था उक्त कार्य के अतिरिक्त अन्य सभी स्त्रोतों जैसे– कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, एपीडा, एन0एच0बी0, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार, कौशल विकास मिशन, आयुष एवं अन्य

संस्थाओं से मिलने वाली सहायता के लिये भी नोडल संस्था का कार्य करेगी और कृषकों/उद्यमियों को इनसे प्राप्त होने वाली सहायता में सहयोग करेगा।

7. चाय विकास बोर्ड

7.1. वर्तमान स्थिति

(1) वर्ष 2004 से चाय विकास बोर्ड कार्य कर रहा है। अब तक 07 पर्वतीय जनपदों में 1170 हैक्टेयर में चाय बागान विकसित किये गये हैं।

(2) प्रतिवर्ष 70–90 हजार किलोग्राम चाय तैयार कर विपणन किया जा रहा है। योजना में 2400 कृषक लाभान्वित हुये हैं तथा 4000 कृषक श्रमिक प्रतिदिन कार्य कर रहे हैं, जिसमें 70 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी है।

(3) चाय बागानों को टी टूरिज्म सेन्टर के रूप में विकसित किया जा रहा है।

(4) राज्य में 11 जनपदों में लगभग 5000 हैक्टेयर भूमि चाय रोपण हेतु चिन्हित की जा चुकी है।

(5) टी–बोर्ड भूमि का चयन कर मृदा परीक्षण की सुविधा उपलब्ध करा रहा है।

7.2. नीति/रणनीति

7.1.1. बोर्ड द्वारा कास्तकार की भूमि लीज पर लेकर चाय बागान विकसित किये जायेंगे, जिसमें निम्नानुसार कार्य होंगे :–

(1) कृषक से 30 वर्ष हेतु भूमि लीज पर ली जायेगी तथा कृषकों को लीज किराये का भुगतान उनके उत्पादन से किया जायेगा।

(2) चाय बागानों की स्थापना हेतु भूमि का चयन बोर्ड द्वारा किया जायेगा।

(3) बोर्ड द्वारा चाय की गुणवत्ता एवं पैदावार बढ़ाने हेतु आधुनिकतम नर्सरियों की स्थापना, चाय के सम्बन्ध में अनुसंधान एवं विकास कार्य के मध्य समन्वय स्थापित किये जायेंगे।

(4) कास्तकारों द्वारा उत्पादित हरी पत्तियों का क्रय बोर्ड द्वारा किया जायेगा तथा स्वयं/समूह/निजी उद्यमियों को टी फैक्ट्री स्थापित करने हेतु प्रोत्साहित किया जायेगा।

(5) राज्य में जैविक चाय की खेती को बढ़ावा देने हेतु बोर्ड द्वारा जिलेवार जैविक चाय बागानों की स्थापना कर इनका प्रमाणीकरण उत्तराखण्ड आर्गनिक सर्टिफिकेशन एजेन्सी, देहरादून द्वारा किया जायेगा।

(6) योजनाओं को मनरेगा से डबटेल किया जायेगा।

(7) कुल 5000 हेक्टेयर भूमि में प्लांटेशन का लक्ष्य आने वाले वर्षों में रखा गया है।

7.1.2. निजी उद्यमियों द्वारा चाय बागान विकसित करना

(1) राज्य के भीतर ऐसी भूमि जो निष्प्रयोज्य हो, कास्तकार द्वारा चाय हेतु दी जा सकती है, जिसे बोर्ड द्वारा चाय प्लान्टेशन हेतु उपयुक्त पाया है, का एकमुश्त (ग्राम सभा/विकासखण्ड) का ब्यौरा एकत्रित कर बोर्ड द्वारा निजी उद्यमियों को दिया जायेगा।

(2) निजी उद्यमी द्वारा कास्तकार के साथ 30 वर्षों हेतु अनुबन्ध सम्पादित किया जायेगा, जिसका लीज किराया आपसी सहमति, राज्य सरकार, बोर्ड के प्रबन्ध परिषद द्वारा तय किया जायेगा।

(3) निजी उद्यमी द्वारा उत्पादन को दृष्टिगत रखते हुए लीज/क्रय की गई भूमि पर स्वयं की चाय फैक्ट्री स्थापित की जायेगी।

(4) निजी उद्यमी टी टूरिज्म के रूप में भी कास्तकार से लीज पर ली गई भूमि में आपसी सहमति से कार्य कर सकता है।

(5) निजी उद्यमी व कास्तकार के मध्य उत्तराखण्ड चाय विकास बोर्ड की भूमिका मध्यस्थता की होगी। निजी उद्यमी द्वारा चाय विकास हेतु लीज पर ली गई भूमि में चाय विकास तथा टूरिज्म के अतिरिक्त कोई अन्य कार्य नही किया जायेगा।

7.1.3. कृषकों द्वारा स्वयं चाय बागान विकसित करना :–

(1) ऐसे कास्तकार जो अपनी भूमि में स्वयं चाय बागान लगाना चाहते हैं, वह क्लस्टर के आधार पर चाय बागान विकसित कर सकते हैं, जिसके लिये 60 हैक्टेयर भूमि होना आवश्यक है।

(2) चाय बोर्ड द्वारा कास्तकारों को तकनीकी सुविधा निःशुल्क उपलब्ध करवाई जायेगी।

(3) चाय विकास बोर्ड द्वारा कास्तकारों की माँग के अनुसार अनुदान मूल्य पर चाय पौध उपलब्ध करवाई जायेगी।

(4) कास्तकार द्वारा चाय बागान विकसित करने पर सरकार द्वारा देय राज सहायता उपलब्ध रहेगी।

(5) कास्तकार द्वारा उत्पादित हरी पत्तियों को निर्धारित दरों पर बोर्ड द्वारा स्थापित, निजी उद्यमी एवं समूहों द्वारा स्थापित चाय फैक्ट्रियों द्वारा क्रय किया जायेगा।

8. जड़ी–बूटी

8.1. वर्तमान स्थिति :– विभिन्न जलवायुगत व भौगोलिक विशेषताओं के कारण उत्तराखण्ड राज्य में विभिन्न प्रकार की बहुमुल्य औषधीय पादप पाये जाते हैं। विश्व स्तर पर इन औषधीय पादपों की अत्यधिक माँग है। वर्ष 2014–15 में इन औषधीय पादपों की घरेलू माँग 195000 मै0टन तथा देश भर में जड़ी बूटी के कच्चे माल की माँग 512000 मै0टन थी। इस माँग में शामिल 1178 प्रजातियों में से 242 प्रजातियां ऐसी हैं, जिनकी माँग 100 मै0टन प्रतिवर्ष से अधिक थी। वर्ष 2014–15 में रू0 3211 करोड़ की 134500 मै0टन की जड़ी–बूटियों का निर्यात किया गया। वर्तमान में 38 प्रजातियां शोध संस्थान के माध्यम से कृषिकरण हेतु कृषकों को उपलब्ध करायी जा रही है। कृषिकरण हेतु कृषकों को पौधशालाओं के माध्यम से पौध उपलब्ध करायी जा रही हैं।

8.2. नीति एवं रणनीति :–

8.1.1. औषधीय एवं सगन्ध पौधों के संरक्षण एवं सतत उपयोगार्थ हिमालयी क्षेत्र में हर्बल बायो वैलीज को कायम रखना।

8.1.2. स्वास्थ्य सुरक्षा के लिये मूल्यवान औषधीय पौधों का चयन कर कृषकों को कृषिकरण के लिये उपलब्ध कराया जायेगा।

8.1.3. बाजार की माँग के अनुरूप जड़ी–बूटियों के कृषिकरण को प्रोत्साहित कर कृषकों की आय में वृद्धि करना।

8.1.4. औषधीय पादपों के कृषकों एवं उद्यमियों को निःशुल्क प्रशिक्षण तथा तकनीकी सहयोग प्रदान किया जायेगा।

8.1.5. कृषकों को औषधीय पादपों के कृषिकरण हेतु पर्याप्त पौध उपलब्ध करायी जायेंगी, जिसके लिये पौधशालायें विकसित की जायेंगी।

8.1.6. जड़ी–बूटी की खेती क्लस्टर के आधार पर की जायेगी ताकि विपणन हेतु पर्याप्त सामग्री उपलब्ध हो सके।

8.1.7. औषधीय पादपों की खेती करने वाले कृषकों का पंजीकरण किया जायेगा ताकि वह प्रदेश में स्थापित जड़ी–बूटी मण्डियों एवं कलैक्शन सैन्टरों में अपने उत्पादों का विक्रय कर सकें।

8.1.8. जड़ी–बूटियों के विपणन हेतु स्थानीय स्तर पर कलैक्शन सैन्टर स्थापित कर विपणन में सहयोग किया जायेगा।

9. सगंधीय नीति

9.1. **परिचय–**प्राचीन काल से ही उत्तराखण्ड हिमालय की पहचान ''महत्वपूर्ण सुगन्ध'' के लिए होती रही है, जिसका एक उत्कृष्ट उदाहरण ''संजीवनी'' है, जिसका उपयोग रामायण काल में ऐरोमाथिरेपी (सुगन्धोपचार) के रूप में किया गया था। सगन्ध कृषिकरण के दृष्टिगत प्रदेश की कृषि जलवायु मुख्यतः तीन भागों जैसे उच्च हिमालयी पर्वतीय (अल्पाइन एवं सब–अल्पाइन 2200 मीटर से ऊपर), मध्य हिमालय पर्वतीय (शीतोष्ण 1700 से 2200 मीटर) एवं तलहटी क्षेत्रों 1700 मीटर से नीचे में वर्गीकृत किया गया है। राज्य की विभिन्न जलवायु परिस्थतियां सगन्ध खेती के लिए अत्यधिक अनुकूल है।

9.2. **उत्तराखण्ड में सगन्ध फसलों की खेती क्यों–**विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में जंगली जानवरों द्वारा नुकसान, असिंचित खेती, ढुलान की समस्या, घरों से खेतों की अत्यधिक दूरी, भूमि कटाव आदि को ध्यान में रखते हुये, सगन्ध फसलों की खेती, किसानों की आय को बढ़ाने के लिए फायदेमन्द है। सगन्ध फसलें, वन्य जीवों से सुरक्षित, कम मात्रा में तेलों के रुप में परिवर्तित होने से ट्रासर्पोटेशन में सुविधाजनक, खेतों में ही मूल्य संवर्धन योग्य तथा तेलों को दीर्घकाल तक स्टोर करने में सक्षम हैं। सगन्ध तेलों का एक संगठित बाजार है एवं इनकी राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में अधिक मांग है। कृषि योग्य बंजर भूमि की विषम परिस्थतियों में उगने की क्षमता के दृष्टिगत सगन्ध फसलों की खेती उपयोगी एवं लाभदायक है।

9.3. **वर्तमान स्थिति–**

9.3.1. पर्वतीय कृषि की चुनौतियों और पलायन को ध्यान में रखते हुये, सगन्ध कृषि आधारित उद्यमों को प्रोत्साहित कर ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर सृजित करने के लिये उपयुक्त है। सगन्ध पौधों की खेती को प्रोत्साहित करने के लिए कृषिकरण, प्रसंस्करण, गुणवत्ता मूल्यांकन और विपणन की सुविधाऐं प्रदान की जा रही हैं। ऐरोमेटिक सेक्टर के बढ़ते बाजार के मध्यजनर राज्य सरकार द्वारा ''सेंटर फॉर एरोमैटिक प्लांटस (कैप)'' की स्थापना 2003 में सेलाकुई, देहरादून में की गई है, जिसमें सगन्ध उत्पादको के गुणवत्ता परीक्षण हेतु प्रयोगशाला की स्थापना की गई है।

9.3.2. इसके अतिरिक्त गुणवत्तायुक्त बीज–पौध सामग्री के लिए हाई–टेक नर्सरी, व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण सुगंधित पौधों के लिए प्रदर्शन प्रक्षेत्र, स्थानीय किसानों और उद्यमियों को उनके सुगंधित उपज हेतु आसवन की सुविधा, अनुसंधान और विकास, सुगंधित उपज हेतु भंडारण सुविधा, किसानों से सुगंधित उपज के खरीद हेतु चक्रीय फंड सुविधा एवं किसानों और उत्पादकों को प्रशिक्षण की सुविधा प्रदान की जा रही है।

9.3.3. **प्रमुख सुगंधित फसलों का चयन**– उत्तराखण्ड की भौगोलिक स्थितियों के अनुसार मैदानी, घाटियों, मध्य पहाड़ी क्षेत्र तथा उच्च पहाड़ी क्षेत्रों हेतु सुगन्धित फसलों की विभिन्न सुगन्धित फसलें चयनित की गयी हैं।

9.3.4. **कलस्टर पद्धति का अंगीकरण**–प्रदेश में कृषि–जलवायु क्षेत्रों के अनुसार चिन्हित सुगंधित फसलों को कलस्टर पद्धति में उत्पादित कर आसवन इकाइयों के लिए वर्ष भर हर्ब प्रदान करने के लिए 3–4 सुगंधित फसलों का चयन किया गया है और तद्नुसार कटाई कैलेंडर बनाया जाता है। एक क्लस्टर में आसवन इकाई को सगन्ध फसल के खेतों के 5–6 कि0मी0 के रेडियस में स्थापित कर परिवहन को सुगम किया जाता है। सगंध क्लस्टर में कम से कम पाँच किसानों का एक समूह जिसका क्षेत्रफल 15 हैक्टेयर हो लिया जाता है। इस कलस्टर पद्वति को वर्ष 2003 में गाँव राजवाला, देहरादून में पहली बार ऐरोमा कलस्टर स्थापित किया गया। इस मॉडल क्लस्टर में 199 किसान सुगंधित खेती के 44.33 हेक्टेयर क्षेत्रफल में कर रहे है। लेमनग्रास, कैमोमाइल, तुलसी, जापानी मिंट और आर्टेमिसिया इस क्लस्टर की प्रमुख सगन्ध फसलें है। वर्तमान में 18000 से अधिक किसान सगन्ध फसलों की खेती, प्रसंस्करण और विपणन में सम्मालित हैं, जिसका क्षेत्रफल 7200 हे0 से अधिक हैं। राज्य में सगन्ध फसल की खेती को क्लस्टर पद्धति में बढ़ा दिया गया है और 109 सगन्ध क्लस्टर विकसित किये गये हैं, जिसमें 178 आसवन इकाईयां कार्यरत हैं।

9.4. **दृष्टिकोण**–उत्तराखण्ड सगन्ध तेलों में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान स्थापित करते हुये पर्वतीय क्षेत्र के सगन्ध तेलों के उत्पादन, मूल्यवर्धन व बाजार व्यवस्था में नेतृत्व प्रदान करना।

9.5. **मिशन–**

9.5.1. व्यापारिक महत्व वाले सगन्ध तेलों से व्यावसायिक लाभ प्राप्त करने हेतु कटाई से पूर्व एवं पश्चात की विधियों एवं आसवन एवं प्रसंस्करण तकनीकी का विकास।

9.5.2. गुणवत्ता–प्रमाणीकरण सुविधायें उपलब्ध कराना।

9.5.3. सगन्ध–पौध आधारित उद्योगों के निरन्तर विकास हेतु उनकी आवश्यकता आधारित शोध करना।

9.5.4. सगन्ध उद्यमियों एवं कृषकों को नवीनतम् सूचनाओं की जानकारी देना।

9.6. **सगन्ध क्षेत्र के विकास हेतु रणनीति**– वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुना करने की दिशा में सगन्ध क्षेत्र की महत्वपूर्ण भूमिका होगी।। राज्य में सगन्ध क्षेत्र की अनुकूलता एवं उपयुक्ता के दृष्टिगत सगन्ध फसलों को बाउंड्री में बगीचों, बंचर एवं परती भूमि तथा फसलों के मध्य अतिरिक्त एवं बोनस फसल के रूप में उगाने के प्रयास किये जायेंगे। इस नीति के माध्यम से कृषकों, कृषक समूहों, कृषक उत्पादक संगठनों, सहकारिताओं, उद्यमियों, उद्योगों, सगन्ध आधारित पर्यटन, छात्रों, शोधकर्ताओं, व्यापारियों, निर्यातकों एवं अन्य हितकारियों का सुगमिकरण कर राज्य में सगन्ध क्षेत्र का विकास किया जाएगा। सगन्ध घाटी व कलस्टरों को विकसित किये जाने के लिए विभिन्न हितभागियों को निम्नानुसार सुविधायें उपलब्ध करायी जायेगी :–

9.6.1. **सगन्ध घाटी एवं सगन्ध कलस्टर का विकास–** सगन्ध सेक्टर को बढ़ावा देने के लिए सगन्ध फसल आधारित कलस्टर एवं घाटी विकसित की जायेगी, जिससे एक ही स्थान में प्रचुर मात्रा में सगन्ध कच्चा उत्पाद तैयार किया जा सके ताकि सगन्ध उत्पाद के प्रसंस्करण/आसवन करने के लिए प्रसंस्करण/आसवन यूनिट स्थापित करने में आसानी हो एवं प्रचुर मात्रा को कम मात्रा में परिवर्तित किया जा सके, ताकि ढुलान पर कम खर्च होने के साथ–साथ उत्पादन के खराब होने की सम्भावना न रहे।

9.6.2. **क्षमता विकास एवं प्रशिक्षण–**सगन्ध फसलों के प्रति कृषकों एवं उद्यमियों को जागरूक करने के उद्देश्य से जागरूकता कार्यक्रम चलाये जायेगे, तथा इच्छुक कृषकों/उद्यमियों को प्रशिक्षण प्रदान किया जायेगा। सगन्ध सेक्टर में कौशल विकास (Skill development) के कार्य विभिन्न विधाओं में चलाये जायेगें ताकि स्थानीय युवा तकनीकी रूप से दक्षता प्राप्त कर स्वरोजगार अपना सकें।

9.6.3. **कृषिकरण –**

(1) लघु, सीमान्त एवं अन्य कृषकों को कृषिकरण हेतु प्रोत्साहित किया जाएगा, जिसे बढ़ावा देने हेतु इच्छुक कृषकों के खेतों का सर्वेक्षण कर उनको उन्नत कृषि तकनीकी, उन्नत प्रजातियों के गुणवत्तायुक्त बीज–पौध उपलब्ध कराये जायेंगे।

(2) सगन्ध फसलों के कृषिकरण को परित्यक्त भूमि, वन्य जीव से प्रभावित क्षेत्रों, असिंचित भूमि, वर्षा आधारित भूमि में प्रोत्साहित किया जायेगा।

(3) मृदा, जल एवं पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने हेतु मृदा एवं जल संरक्षण की उन्नत तकनीकी को प्रोत्साहित किया जायेगा।

(4) वर्तमान फसल चक्रों में सगन्ध फसलों को अन्तःफसल, बाउन्ड्री फसल एवं अल्प अवधि की फसल के रूप में प्रोत्साहित किया जायेगा।

(5) सगन्ध कृषिकरण को बढ़ावा देने हेतु मनरेगा युगपतिकरण (convergence) किया जायेगा।

(6) कृषकों को सगन्ध फसलों की जैविक खेती करने हेतु प्रोत्साहित किया जायेगा।

(7) उद्यान विभाग व अन्य सम्बन्धित विभागों द्वारा प्रदत्त की जाने वाली सुविधाओं/योजनाओं को, जो सगन्ध क्षेत्र हेतु उपयुक्त हों, को कृषकों/उद्यमियों को उपलब्ध करायी जायेगी।

(8) सगन्ध फसल आधारित घाटी/कलस्टर विकसित करने हेतु व्यक्तिगत कोआपरेटिव/उद्यमी आदि को 30 वर्ष के लिए 30 एकड़ जमीन लीज पर प्रदान कराने हेतु सहयोग/सुगमिकरण किया जायेगा।

9.6.4. **कटाई उपरान्त प्रबन्धन एवं प्रसंस्करण**– सगन्ध फसलों को प्रचुर मात्रा से कम मात्रा में परिवर्तित करने, फसल उत्पाद को खराब होने से बचाने एवं ढुलान (Transportation) लागत कम करने के उददेश्य से कृषकों के खेतों अथवा प्लान्टेशन साईट के नजदीक कलस्टर/वैली में आसवन/प्रंसस्करण यूनिट की स्थापना में सहायता प्रदान की जायेगी। ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों की स्थापना कर स्थानीय युवाओं को स्वरोजगार हेतु प्रोत्साहित किया जायेगा।

9.6.5. विपणन–कृषकों को सगन्ध उत्पादन एवं सुगन्धित तेलों का सुनिश्चित बाजार उपलब्ध कराने के उददेश्य से निम्नानुसार सहयोग प्रदान किया जायेगाः–

(1) पंजीकृत कृषकों को सुगन्धित तेलों एवं अन्य सगन्ध उत्पादों पर न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) की सुविधा प्रदान की जायेंगी।

(2) कृषकों/उद्यमियों को विपणन में प्रशिक्षित करने हेतु क्रेता–विक्रेता बैठक आयोजित की जायेंगी।

(3) कृषकों के उत्पाद को प्रदेश में आने वाले पर्यटकों को सीधे विक्रय करने हेतु आवश्यक पैकेजिंग, डिजाईनिंग एवं प्रशिक्षण पिलग्रिम मार्केटिंग कार्यक्रम के अन्तर्गत सहयोग प्रदान किया जायेगा।

9.6.6. गुणवत्ता नियंत्रण एवं प्रमाणीकरण– पंजीकृत कृषकों को प्रमाणीकरण की सुविधा उपलब्ध करायी जायेगी तथा उद्यमियों एवं उद्योगों को भी गुणवत्ता नियन्त्रण एवं प्रमाणीकरण करने में सहयोग प्रदान किया जायेगा।

9.6.7. अनुसंधान एवं विकास–

(1) उन्नत प्रजाति का विकास, बायोप्रोस्पेकटिंग, कृषि तकनीक, आसवन एवं प्रसंस्करण तकनीक, मूल्य संवर्धन, गुणवत्ता मूल्यांकन, भण्डारण तकनीक एवं सगन्ध तेलों के उपयोग आदि पर शोध एवं विकास कार्यों को प्रोत्साहित किया जाएगा।

(2) सगन्ध क्षेत्र में होने वाले विशिष्ट शोध कार्यों को बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के अन्तर्गत संरक्षित करने के उद्देश्य से पेटेन्ट किये जायेगे।

(3) सगन्ध क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास कार्यों को सुदृढ़ करने हेतु विभिन्न प्रयोगशालाऐं यथा शस्य विज्ञान, पादप विज्ञान, रसायन विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी, मूल्य संवर्धन, उत्पाद विकास, ऐरोमाथिरेपी, परफ्यूमरी एवं कास्मेटिक आदि प्रयोगशालाओं की स्थापना का प्रयास किया जाएगा।

9.6.8. सगन्ध उत्पाद आधारित लघु उद्यमों की स्थापना–राज्य सरकार एम0एस0एम0ई0 पॉलसी–2015 के अन्तर्गत आसवन एवं प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन, प्रोडेक्ट डवलपमेन्ट, परफ्यूमरी, ब्लेन्डिग, ऐरोमाथिरेपी–स्पा, ऐरोमा पर्यटन आदि क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहन दिया जायेगा।

9.6.9. सगन्ध पर्यटन (Aroma Tourism) –स्थानीय युवाओं का स्वरोजगार एवं कृषकों की आय सृजन करने हेतु कृषकों की आय में वृद्धि हेतु राज्य में विकसित सगन्ध कलस्टरों को केरल एवं गोवा में मसाला पर्यटन की तर्ज पर ऐरोमा पर्यटन प्रारम्भ करने के प्रयास किये जायेंगे।

9.6.10. हिमालयन माईनर इशेंशियल ऑयल–प्रदेश में प्राकृतिक रूप से उग रहे सगन्ध जंगली खरपतवारों यथा–आर्टिमिशया वल्गेरिस, गनियाग्रास, कालाबांसा, लैन्टाना, यूपेटोरियम आदि जोकि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, की कटाई एवं आसवन कर, सुगन्धित तेल एवं अन्य मूल्य संवर्धित उत्पाद तैयार करने के व्यवसाय को बढ़ावा दिया जाएगा।

10. रेशम विकास

10.1. किसी भी राज्य के लिए सम्पूर्ण विकास हेतु यह आवश्यक है कि विकास का पूर्ण आर्थिक एवं सामाजिक लाभ समाज के प्रत्येक वर्ग को प्राप्त हो. राज्य की नीतियां व योजना का स्वरूप राज्य में निवास कर रहे लोगों को गरिमापूर्ण जीवन यापन करने में सहायक होनी चाहिए. उक्त कार्य के पूर्ति हेतु उत्तराखण्ड राज्य के लिए रेशम वस्त्र/परिधानों के उत्पादन, विकास एवं विविधीकरण हेतु नीति प्रस्तावित की जा रही है।

वस्त्र विनिर्माण उद्योग की उत्तराखण्ड की आर्थिकी में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। रेशम कोया एवं वस्त्रोत्पादन क्षेत्र में इससे जुड़ी लघु इकाइयों के अधीन पर्याप्त मात्रा में रोजगार अवसर सृजित करती है। वस्त्रोद्योग एक श्रमपरक उद्योग है जिसमें राज्य के विकास हेतु व्यापक संभावनायें विद्यमान है। रेशम विकास के अन्तर्गत कोया उत्पादन, रेशम धागाकरण, हथकरघे/हैण्डलूम, कताई, बुनाई, रंगाई–छपाई, वस्त्र विनिर्माण, इम्ब्रायडरी आदि वस्त्रोत्पादन सम्बन्धी विविध गतिविधियां सम्मिलित हैं जिसके क्रियान्वयन से राज्य के वस्त्रोद्योग के क्षेत्र में नया निवेश प्राप्त होगा तथा व्यापक संख्या में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार का सृजन होगा।

10.2. वर्तमान स्थिति–

(1) राज्य में 7993 एकड़ भूमि में शहतूत पौधों की उपलब्धता

(2) प्रदेश में क्लस्टरों का विकास कर शहतूती वृक्षारोपण एवं रेशम कीटपालन का कार्य करना

(3) प्रदेश के 12 जनपदों में 72 राजकीय रेशम फार्मों की उपलब्धता

(4) राज्य में वर्तमान में 10500 रेशम कीटपालक, धागाकारक एवं बुनकर

(5) पर्याप्त मात्रा में श्रमिकों की उपलब्धता

(6) आधारभूत संरचनाओं की उपलब्धता

(7) राज्य में केन्द्रीय रेशम बोर्ड की अनुसंधान एवं विकास इकाईयों की उपलब्धता

10.3. दृष्टिकोण

(1) राज्य में रेशम वस्त्रोद्योग के क्षेत्र में रोजगार के अधिकतम अवसरों को सृजित करने हेतु नये निवेश को आकर्षित करने तथा निर्बल आयवर्ग के परिवारों के जीवनस्तर में सुधार हेतु विभागीय तकनीकियों का उच्चीकरण।

(2) गुणवत्तायुक्त रेशम कीटाण्ड उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना।

(3) रेशमोद्योग को दीर्घकालीन रूप से लाभकारी बनाना।

(4) आधुनिक तकनीकियों के अंगीकरण से रेशमोत्पादन में मात्रात्मक एवं गुणात्मक वृद्धि।

(5) राज्य से प्रति व्यक्ति आय को देश के प्रति व्यक्ति आय के समकक्ष लाने के उद्देश्य से रेशम वस्त्र विनिर्माण क्षेत्र में पर्याप्त रोजगार सृजन हेतु औद्योगिक निवेश को प्रोत्साहन।

(6) रेशम उत्पादन से रेशम कीटपालकों एवं अन्य जुड़े लाभार्थियों की आय में वृद्धि कर दोगुनी करना।

(7) उत्पादन, उत्पादकता, गुणवत्ता तथा लाभार्जन हेतु ऊर्ध्वगामी व अधोगामी समन्वय का विस्तार।

(8) रेशम वस्त्र/परिधानों के उत्पादन हेतु निवेश को आकर्षित करना।

(9) उत्तराखण्ड राज्य के रेशमात्पादों से राष्ट्रीय/अन्तर्राष्ट्रीय मांग की पूर्ति करना तथा कच्चा रेशम एवम् अन्य रेशम उत्पादों के आयात को न्यूनतम करना।

(10) रेशम वस्त्र उत्पादन क्षेत्र की आवश्यकता एवं मांग के अनुरूप कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से कुशल श्रम/मानव संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित कराना।

(11) वस्त्रोत्पादन क्षेत्र को और अधिक गतिशील बनाने हेतु भारत सरकार द्वारा संचालित योजनाओं का अधिकतम लाभ प्राप्त करना।

10.4. रणनीति–

10.4.1. रेशम विकास के अन्तर्गत पौधशाला स्थापना, वृक्षारोपण, चॉकी कीटपालन एवं कोया उत्पादन, रीलिंग, हथकरघा विकास, स्पिनिंग, वीविंग, निटिंग, डाईंग, डिजायनिंग, प्रोसेसिंग गार्मेन्टिंग (वस्त्र विनिर्माण,

इम्ब्रायडरी व अन्य गुणवत्ता सम्बर्धन) आदि लघु उद्योगों की श्रृंखला का समावेश है, जिन्हें सुदृढ करने हेतु निम्न बिन्दुओं पर विशेष बल दिया जाएगा।

(1) अवस्थापना सुविधाओं का विकास
(2) पारम्परिक रेशम क्लस्टर्स का उच्च स्वरूप में समुन्नत करना
(3) रेशम वस्त्र उत्पादन क्षेत्र में निवेश को आकर्षित करने हेतु औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार
(4) रेशम उद्योग से जुडी सूक्ष्म एवं लघु इकाईयों को प्रोत्साहन
(5) उपलब्ध उत्पादक इकाई को उद्यमियों को उपलब्ध कराने हेतु सुविधाओं का विकास
(6) सेक्टर में औद्योगिक निवेश को आकर्षित करने हेतु सहायता एवं अनुदान
(7) उद्योग हेतु उपयुक्त श्रम शक्ति उपलब्ध कराने हेतु कौशल एवं दक्षता विकास कार्यक्रम
(8) अनुसंधान एवं गुणवत्ता सुधार

10.4.2. <u>निवेशकों को वित्तीय एवं ढांचागत सुविधायें उपलब्ध कराने हेतु निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाएगा।</u>

(1) शहतूत पौधों के विस्तार तथा गैप फिलिंग हेतु किसान नर्सरी की स्थापना
(2) राज्य में सेन्ट्रल सेक्टर योजनान्तर्गत बाईवोल्टीन शहतूती रेशम, ओकटसर एवं एरी रेशम क्लस्टरों का विकास
(3) राज्य में रेशम हितधारकों विशेषकर महिलाओं की रेशम वस्त्र विकास सम्बन्धी क्षमता उन्नयन हेतु समुचित व्यवस्था
(4) निवेशकों को अवसंरचनात्मक विकास, वित्तीय प्रोत्साहन एवं ऊर्जा क्षेत्रों से सम्बन्धित सहायता हेतु उत्तराखण्ड सूक्ष्म एवं मध्यम उद्यम नीति 2015 वर्तमान से लागू
(5) राज्य सरकार द्वारा विकसित की गई ढांचागत सुविधाओं को निवेशकों को लीज पर दिये जाने का प्राविधान।

11. <u>कृषि–मौसम विज्ञान</u>

अल्प, मध्यावधि और दीर्घावधि मौसम के पूर्वानुमान में राष्ट्रीय क्षमता काफी अधिक है। महत्वपूर्ण बात सामान्य जानकारी को फसल पद्धतियों और जल की उपलब्धता पर आधारित स्थान विशिष्ट भू–उपयाग सलाह में बदलने की है। किसानों को कम से कम समय के अंतराल में समुचित भूमि उपयोग सम्बन्धी सुझाव देने के लिए प्रशिक्षित पंचायत स्तर के कर्मियों द्वारा समय–समय पर जारी कृषि–मौसम विज्ञानीय सलाह का उपयोग किया जाएगा।

12. <u>पशुपालन</u>

12.1. वर्तमान स्थिति

वर्ष 2012 की पशुगणना के अनुसार उत्तराखण्ड राज्य में गोवंशीय पशुधन की संख्या 20.06 लाख, महिवंशीयों की संख्या 9.88 लाख, भेडों की संख्या 3.69 लाख, बकरियों की संख्या 13.67 लाख एवं अन्य पशुओं की संख्या 0.65 लाख है। प्रदेश में कुल पशुधन की संख्या 47.95 लाख तथा कुल कुक्कुटों की संख्या 46.42 लाख है। राज्य में वर्ष 2016–17 में कुल दुग्ध उत्पादन 16.92 लाख टन, अण्डा उत्पादन 41.19 करोड़, मांस उत्पादन 2.84

करोड़ किलोग्राम तथा ऊन उत्पादन 5.38 लाख किलोग्राम अनुमानित किया गया हैं। वर्तमान में प्रदेश की अनुमानित जनसंख्या लगभग 1.09 करोड़ है, इस प्रकार प्रतिव्यक्ति दुग्ध की दैनिक उपलब्धता 440 ग्राम, अण्डे की प्रतिव्यक्ति वार्षिक उपलब्धता 39 तथा मांस की प्रतिव्यक्ति वार्षिक उपलब्धता 2.615 किलोग्राम आंकलित की गयी है।

12.2. नीति/रणनीति

पशुधन का स्वामित्व कृषि की अपेक्षा अधिक समतामूलक हैं लघु एवं सीमान्त कृषकों के पास भी पशुधन की उपलब्धता वृहद् भूस्वामी कृषकों के समतुल्य है। राज्य के सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 2.50 प्रतिशत पशुपालन से प्राप्त होता है। राज्य में कृषि के अन्तर्गत बोया गया कुल क्षेत्रफल तथा वन भूमि से चारे योग्य बायोमास कुशल वन प्रबन्धन के द्वारा उपलब्ध हो सकता है। पशुपालन के क्षेत्र में निजी एवं सार्वजनिक पूंजीनिवेश किये जाने पर तथा कुशलापूर्वक नई पहल किये जाने पर लाभ लागत अनुपात फसल उत्पादन की अपेक्षा काफी अधिक हो सकता है। साथ ही फसल उत्पादन एवं पशुधन संवर्द्धन एक दूसरे की अनूपूरक है जिनसे कृषि अर्थव्यवस्था दीर्घकाल तक स्थिर रह सकती है। जैविक कृषि पशुधन उपलब्धता एवं संवर्द्धन पर निर्भर है। देशके आर्थिक विकास के साथ–साथ पशुओं से प्राप्त होने वाले खाद्य उत्पादों की मांग में लगातार वृद्धि हो रही है, जो कि उच्च वर्ग के साथ–साथ शहरी मध्य वर्ग के Food Basket में सम्मिलित है। अतः पशुपालन राज्य की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के उन्नयन के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इस क्षेत्र के उन्नयन के लिए निम्न नीति/रणनीति अंगीकृत की जायेंगी :–

12.2.1. पशुधन विकास –

(1) पशुधन प्रजनन नीति 2005 के अनुसार आवश्यक सुविधायें सृजित करने पर विशेष ध्यान दिया जायेगा।

(2) अतिहिमीकृत वीर्य उत्पादन केन्द्र में सैक्सड सार्टेड सीमन का उत्पादन कर कृत्रिम गर्भाधान के माध्यम से उत्तम गुणवत्ता की, विशेषकर स्वदेशी नस्ल की बछियां उत्पन्न कर दुग्ध उत्पादन में वृद्धि कर कृषकों की आय को बढ़ाया जायेगा।

(3) पर्वतीय जनपदों में पाली जाने वाली तथा राज्य की एकमात्र मान्यता प्राप्त "बद्री नस्ल" की गाय एवं स्वदेशी नस्ल के गौवंशीय पशुओं की दुग्ध उत्पादन क्षमता में वृद्धि की जायेगी।

(4) पशुपालन को प्रोत्साहित करने हेतु आवश्यक निवेशों की आपूर्ति, पशु चिकित्सा सेवाओं का विस्तारीकरण एवं आधुनिकीकरण कर बेहतर स्वास्थ्य की व्यवस्था की जायेगी तथा पशु रोगों की आधुनिक एवं वैज्ञानिक तरीके से जांच की सुविधा उपलब्ध करायी जायेगी।

(5) संक्रामक पशु रोगों से पशुधन को बचाने हेतु नियमित रूप से टीकाकरण किया जायेगा।

(6) पशुधन का बीमा किया जायेगा।

(7) पशु चिकित्सकों, अन्य सहायकों एवं पशुपालकों को पशुपालन की नवीनतम तकनीकी में आवश्यकतानुसार प्रशिक्षित किया जायेगा।

(8) गोवंश की सुरक्षा एवं संरक्षा के लिए सभी सम्भव उपाय किये जायेंगें।

(9) शूकर पालन व्यवसाय को प्रोत्साहन के लिए विशेष योजनायें संचालित की जायेंगी।

12.2.2. पशु पोषण सुरक्षा

(1) पर्वतीय क्षेत्रों के दुर्गम स्थानों में चारे के परिवहन एवं भण्डारण की समस्या को देखते हुये भूसे एवं पुआल को कॉम्पैक्ट फीड ब्लाक में परिवर्तित करके पौष्टिक सेल्युलोजिक चारा तैयार कर पशुपालकों को उपलब्ध कराया जायेगा।

(2) विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में पशुपालकों को चारा खिलाने हेतु नांद, डलिया अथवा चरही का प्रयोग करने के लिए तथा हस्त चालित कुट्टी काटने की मशीनों के प्रयोग हेतु प्रेरित किया जायेगा।

(3) राज्य के पर्वतीय अंचलों मे वर्तमान में वन पंचायत भूमि मे हरे चारे का उत्पादन किया जा रहा है। वन विभाग के माध्यम से इस प्रयास में और गति लाई जायेगी। उपरोक्त भूमि हेतु अलग–2 समुद्र तल से ऊंचाई, मृदा स्थिति, अभिमुखों की दशा तथा वानस्पतिक विविधता को देखते हुए वन विभाग एवं ग्राम पंचायतों के माध्यम से बहुवर्षीय चारा घासों तथा चारा वृक्षों के रोपण का कार्य किया जायेगा।

(4) पर्वतीय अंचलों मे कृषि अयोग्य, बंजर, गौचर, परती, अकृष्य, परित्यक्त भूमि को हरे चारे के उत्पादन हेतु आच्छादित किया जायेगा तथा रिक्त स्थानों पर चारा वृक्षों का रोपण किया जायेगा।

(5) उत्तराखण्ड के मैदानी तथा तराई क्षेत्रों में हरा चारा आपूर्ति में गन्ने के अगोला का महत्वपूर्ण स्थान है, परन्तु गन्ने की खेती के क्षेत्रफल में वृद्धि की संभावनाएं बहुत कम है, अतः अगोला उत्पादन के इसी स्तर को स्थिर रखना ही पर्याप्त होगा।

(6) चारागाहों एवं बुग्यालों में व्यवस्थित चुगान एवं चारागाह प्रबन्धन द्वारा इनकी चारागाहों की उत्पादन क्षमता बढ़ाने हेतु संरक्षित चक्रीय चुगान की व्यवस्था की जायेगी।

(7) खेतों की मेंढ़ों तथा बागानों में पौष्टिक घास रोपण को प्रोत्साहित किया जायेगा।

(8) चारा योग्य लोकप्रिय झाड़ियों को संरक्षण प्रदान कर पशु चारे के उत्पादन में वृद्धि की जायेगी।

12.2.3. कुक्कुट विकास

(1) कुक्कुट पालन को एक कृषि कार्यकलाप के रूप में प्रोत्साहन हेतु आवश्यक निवेशों का समुचित प्रबन्धन, कुक्कुट उत्पादों का विपणन एवं बैकयार्ड मुर्गी पालन के अन्तर्गत द्विउद्देशीय (अण्डा एवं मांस उत्पादन) कुक्कुट पालन को प्रोत्साहित किया जायेगा।

(2) बैकयार्ड कुक्कुट पालन के अन्तर्गत द्विउद्देशीय कुक्कुट पालन हेतु क्रायलर कुक्कुट पक्षी पालन के लिए विशेष परियोजनायें क्रियान्वित की जायेगी।

(3) कॉमर्शियल कुक्कुट पालन के अन्तर्गत अण्डा उत्पादन हेतु लेयर व मांस उत्पादन हेतु ब्रायलर कुक्कुट पक्षी के प्रजनन एवं पालन की प्रबल संभावनायें हैं। अतः इनके पालन के लिए विशेष परियोजनायें क्रियान्वित की जायेगी।

(4) कुक्कुट पक्षियों के रोगों की आधुनिक एवं वैज्ञानिक तरीके से जांच की सुविधा उपलब्ध करायी जायेगी।

12.2.4. भेड़ एवं ऊन विकास

(1) राजकीय भेड़, बकरी एवं शशक प्रजनन प्रक्षेत्रों का सुदृढ़ीकरण एवं आधुनिकीकरण किया जायेगा।

(2) भेड़, बकरी एवं शशक नस्ल सुधार कार्यक्रम में उन्नतशील मेढ़ा/बकरों आदि का पशुपालकों को वितरण किये जाने हेतु योजना संचालित की जायेगी।

(3) भेड़, बकरी एवं शशक में नियमित टीकाकरण एवं प्रयोगशाला जांच के माध्यम से रोग नियत्रंण हेतु योजना संचालित की जायेगी।

(4) भेड़ एवं बकरियों में हेतु कृत्रिम गर्भाधान के माध्यम से नस्ल सुधार कर उनकी उत्पादक क्षमता बढ़ाने हेतु योजना संचालित की जायेगी।

(5) भेड़–बकरी पैरावेट्स के माध्यम से प्राथमिक उपचार एवं विभागीय योजनाओं का प्रचार–प्रसार किया जायेगा।

(6) भेड़ों में शत–प्रतिशत मशीन शियरिंग को प्रोत्साहित किया जायेगा।

(7) बकरी पालन में सघन/अर्द्धसघन प्रबन्धन पद्धति को बढ़ावा देने हेतु योजना संचालित की जायेगी।

(8) पशुपालकों को पशु उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त होने हेतु ऊन एवं मांस के उचित विपणन के लिये ग्राम स्तर पर स्वयं सहायता समूहों एवं संघों का गठन हेतु योजना संचालित की जायेगी।

(9) जैविक ऊन एवं मांस उत्पादन को प्रोत्साहन करने हेतु योजना संचालित की जायेगी।

(10) ऊन एवं मांस की गुणवत्ता एवं मात्रा में सुधार हेतु योजना संचालित की जायेगी।

13. मात्स्यिकी

13.2. सार्वजनिक नीति के क्षेत्र में सुनियोजित जल कृषि सुधार करने की आवश्यकता है जिससे कि भूमिहीन श्रमिक किसानों को जल–कृषि के लिए सार्वजनिक क्षेत्र में ग्रामीण तालाब और अन्य जलाशय सुलभ कराए जा सकें।

13.3. राष्ट्रीय मात्स्यिकी विकास बोर्ड (एनएफडीबी) को भारत सरकार द्वारा स्थापित किया गया है, जिसके अनुसार मात्स्यिकी और जल–कृषि से सम्बन्धित प्रमुख कार्यकलापों का व्यावसायिक प्रबन्धन करने की आवश्यकता है।

13.4. आधुनिक जल–कृषि प्रथाओं को बढ़ावा देने और मूल्य–वर्द्धन के लिये निम्नलिखित कदम उठाए जाएंगे।

13.4.4. मत्स्य पालक कृषकों को मछली पकड़/कल्चर/उपभोग श्रृंखला के सभी पहलुओं में प्रशिक्षण देने स्वास्थ्यकर सम्भाल और अन्य पहलुओं के लिये गुणवत्ताप्रद जानकारी देने हेतु ''सभी के लिए मछली'' प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण केन्द्रों का बनाना।

13.4.5. मत्स्य अवतरण केन्द्रों की कार्यकुशलता सुनिश्चित करने के लिए छोटे आकार के ड्रेजर का प्रावधान।

13.4.6. **मत्स्य बीज और खाद्य :** उत्तम कोटि और रोग–मुक्त मत्स्य बीज सफल अर्न्तदेशीय मत्स्य पालन की कुंजी है। मत्स्य बीज प्रजनन उत्पादन में पगामी मछुआरों और उनके समूहों जैसे स्वयं सहायता समूहों (एस एच जी) को प्रशिक्षित किया जाएगा और वहनीय कीमतों पर बीज और मत्स्य बीज खाद्य उपलब्ध कराया जाएगा। इसके लिये राष्ट्रीय मात्स्यिकी विकास बोर्ड और अन्य एजेंसियों से उचित तकनीकी सहायता प्राप्त की जाएगी।

14. मूल्य संवर्द्धन एवं प्रसंस्करण

यह सुस्थापित तथ्य है कि कृषि उत्पादों में मूल्यवर्द्धन करने से किसानों की आय के स्तरों में वृद्धि होती है। अतः उनके उत्पादन को प्रसंस्करण तथा अन्य मूल्य श्रृंखला क्रियाकलापों के साथ समेकित करना आवश्यक है। देश में कटाई उपरान्त अवसंरचना अपेक्षित स्तर की न होने के कारण 15 से 30% तुड़ाई उपरान्त क्षति होती है (औद्यानिक उपजों, दुग्ध व अन्य शीघ्र नष्ट होने वाले खाद्य पदार्थो) जिसे कम करने हेतु तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन एवं प्रसंस्करण एक महत्वपूर्ण घटक है। अतः यदि तुड़ाई उपरान्त क्षति के इस प्रतिशत को प्रभावी एवं उपयोगी अवस्थापना सुविधाओं (प्रसंस्करण) एवं दक्षता वृद्धि कर काफी हद तक कम किया जा सकता है। उल्लेखित तथ्यों के दृष्टिगत इस क्षेत्र में समुचित ध्यान दिया जा रहा है, जिसे और प्रभावी बनाये जाने की आवश्यकता है। जिससे कि

उत्पादन एवं उपलब्धता के स्तर के बीच उत्पन्न अन्तर को कम किया जा सके तथा उत्पादक एवं उपभोक्ता दोनों ही लाभान्वित हो सके।

(1) **उद्देश्य**

- राज्य के कृषकों की आय में वृद्धि करना ।
- खाद्य के समस्त घटकों यथा परम्परागत एवं जैविक उत्पादों, फल, सब्जियां, दलहन, तिलहन, दुग्ध व अन्य खाद्य पदार्थो का मूल्य संवर्द्धन करना।
- खाद्य प्रसंस्करण के क्षेत्र में रोजगार के नये अवसर पैदा करना।
- कृषकों को उनके उत्पादों का बेहतर मूल्य दिलाना।
- उपभोक्ताओं को उत्तम गुणवत्तायुक्त प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद उचित मूल्य पर उपलब्ध कराना।
- औद्यानिकी आधारित खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों का विकास कर राज्य के कृषकों को अन्य नगदी उद्यानिकी फसलों की खेती के लिए प्रेरित करना।

(2) **रणनीति**

- राज्य सरकार द्वारा संचालित **सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र नीति–2015** का प्रभावी कियान्वयन किया जायेगा।
- उद्यमियता विकास हेतु खाद्य प्रसंस्करण प्रशिक्षण केन्द्रों का सुदृढ़ीकरण किया जायेगा।
- प्रसंस्करण उद्योगों को कच्चे माल की निर्बाध आपूर्ति हेतु खाद्य के सभी घटकों का क्लस्टर आधारित उत्पादन किया जायेगा।
- खाद्य के सभी घटकों के अन्तर्गत उत्पादन से उपभोग के बीच होने वाली तुड़ाई उपरान्त क्षति को कम करने एवं कृषकों को उचित मूल्य दिलाने के दृष्टिगत उचित भण्डारण, रख–रखाव एवं परिवहन हेतु आधारभूत अवस्थापना सुविधाओं का विकास किया जायेगा।
- केन्द्र सरकार द्वारा स्थापित किये जा रहे मेगा फूड पार्क में स्थापित होने वाली प्रसंस्करण इकाईयों की स्थापना को प्रोत्साहित किये जाने हेतु राज्य सरकार द्वारा सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र नीति–2015 के अतिरिक्त प्रदेश सरकार द्वारा समय–समय पर देय अन्य सुविधायें भी दी जायेंगी।

इस नीति के किसी भी चरण पर यदि किसी भी प्रकार के संशोधन अथवा नीति में अतिक्रमण की आवश्यकता होती है तो ऐसे संशोधन अथवा नीति के अतिक्रमण को अनुमोदित करने के लिये केवल माननीय मंत्री परिषद ही अधिकृत होगी।

****